अंक - 3(1)

वर्ष 2020

रेशा किरेण

प्राकृतिक रेशा पर आधारित एक अर्धवार्षिक कृषि शोध पत्रिका

भाकृअनुप - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
(आईएसओ 9001 : 2015 प्रमाणित संस्थान)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
बैरकपुर, कोलकाता - 700121

रेशा किरण

प्राकृतिक रेशा पर आधारित एक अर्धवार्षिक कृषि शोध पत्रिका

अंक : 3 (1)

2020

भाकृअनुप - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
नीलगंज, बैरकपुर, कोलकाता-700121, पश्चिम बंगाल, भारत

संरक्षक एवं प्रकाशक

डॉ. गौरांग कर, निदेशक
भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान
नीलगंज, बैरकपुर, कोलकाता-700121, पश्चिम बंगाल, भारत
दूरभाष: (033) 25356124, 25356125
फैक्स: (033) 2535 0415
ई मेल: director.crijaf@icar.gov.in

मुख्य संपादक

श्री विकास मंगल

संपादक मंडल

**डॉ. एस. सतपथी, डॉ. एस. के. पाण्डेय, डॉ. ए.के. सिंह, डॉ. एस. के. झा,
डॉ. शैलेश कुमार, डॉ. जे. के. मीना एवं श्री मनोज कुमार राय**

मुखपृष्ठ परिकल्पना

श्री विकास मंगल एवं श्रीमती शुक्ला चक्रवर्ती

उचित उद्धरण

रेशा किरण 2020. प्राकृतिक रेशा पर आधारित एक अर्धवार्षिक कृषि शोध पत्रिका, अंक 3 (1), विकास मंगल, भाकृअनुप-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान नीलगंज, बैरकपुर, कोलकाता-700121

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण पूर्णतया संबंधित लेखक के हैं। संस्थान अथवा राजभाषा कक्ष का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

© इस पत्रिका में प्रकाशित सामग्री प्रकाशक की अनुमति के बिना कहीं भी प्रस्तुत करना निषेध है।

निदेशक की कलम से

भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का एक प्रमुख फसल अनुसंधान संस्थान है जो कि कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत आता है जिसका मुख्य अधिदेश पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में रेशे की उपज और गुणवत्ता में सुधार के लिए तकनीकियों का विकास करना है। यह संस्थान पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में नयी तकनीकियों के विकास और इस क्षेत्र में समस्याओं को सुलझाने के साथ-साथ बदलते परिदृश्य के प्रति सतर्क एवं उत्तरदायी है। संस्थान की बहु-विभागीय वैज्ञानिक टीम उच्च गुणवत्ता वाले रेशा के विकास के लिए समर्पित रूप से काम कर रही है जो पारंपरिक उपयोग के अलावा विविध उत्पादों को बनाने की आवश्यकता को पूरा कर सकता है | रेशा के पारंपरिक उपयोग से परे पटसन एवं समवर्गीय रेशों का औद्योगिक उपयोग बढ़ाने के लिए अन्य पहलुओं जैसे दवा, पौष्टिक-औषधीय और विविध व्यवसायिक उपयोग पर अनुसंधान द्वारा प्राथमिकता दी जा रही है।

कागज उद्योग में उपयुक्त गुणवत्ता वाले लुगदी के लिए उन्नत अल्फा-सेलूलोज युक्त सनई के अधिक बायोमास वाली प्रजातियों के विकास पर जोर दिया गया है। इसी तरह रेमी और फ्लैक्स रेशा फसलों में शोध एवं अनुसंधान के द्वारा उन्हें उच्च गुणवत्ता वाले कपड़े बनाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। अधिक मजबूती और स्थायित्व वाले सीसल और पटसन रेशे रस्सियाँ, भू-वस्त्र और औद्योगिक वस्त्रों के निर्माण के लिए संभावित कच्चे माल के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं। ये फ्लोएम आधारित जैव अपघटनीय प्राकृतिक रेशे ही आज एकमात्र विकल्प हैं जो संश्लेषित रेशों के उपयोग को अवरुद्ध कर पर्यावरण को बचा सकते हैं। संस्थान द्वारा रेमी और सीसल आधारित कृषि प्रणाली का विकास न केवल मिट्टी का संरक्षण करता है बल्कि देश की बंजर और सीमांत क्षेत्र पर बसने वाले आदिवासी किसानों की आजीविका को भी सुरक्षित कर सकता है।

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में निरंतर अनुसंधान कार्यों से विकसित नवीनतम तकनीकों को जनसाधारण तथा किसानों तक उनकी भाषा में उपलब्ध कराना नितांत आवश्यक है ताकि नवीनतम तकनीकों का कृषक समुदाय में यथोचित हस्तांतरण हो सके। कहने की जरूरत नहीं कि भाषा एवं साहित्य ही अभिव्यक्ति का वह सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा किसी भी प्रकार की सूचनाएँ एवं विचार मूलरूप से जनसमूह तक पहुँचायी जा सकती है।

रेशा किरण के इस अंक में लेखों के प्रारूप में कुछ बदलाव किया गया है। हिन्दी भाषा में प्राकृतिक रेशा फसलों पर किए गए शोध कार्यों का वर्णन शोध पत्र एवं लोकप्रिय लेख के रूप में वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी प्रयास के रूप में संस्थान की यह शोध पत्रिका का वर्तमान अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका अपने उद्देश्य को पूरी तरह साकार करेगी और इसे अधिक उपयोगी एवं प्रभावी बनाने में संस्थान के समस्त वैज्ञानिक, अधिकारी एवं कर्मचारी अपना योगदान देते रहेंगे। मैं व्यक्तिगत रूप से रेशा किरण के प्रकाशन से जुड़े सभी सदस्यों को बधाई देते हुए इस पत्रिका के सतत एवं निरंतर प्रगति व विकास की कामना करता हूँ।

(गौरांग कर)
निदेशक

बैरकपुर
दिनांक: 11.07.2020

विषय सूची

क्रम संख्या	लेख का विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1	प्राकृतिक रेशा फसलों के अनुसंधान और विकास में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान की भूमिका: संभावनाएं और चुनौतियां	गौरांग कर	1
2	भारतीय अर्थव्यवस्था में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों का महत्व	एस. के. झा, शैलेश कुमार, एस. सरकार एवं आर. के. नायक	7
3	भारत में पटसन की खेती की व्यवहार्यता और स्थिरता	सितांशु सरकार, धनंजय बर्मन एवं अशेष कुमार घोरई	10
4	कृषि की आय बढ़ाने और मृदा संरक्षण में सीसल मिश्रित खेती की भूमिका	मधुसूदन बेहेरा एवं अजित कुमार झा	14
5	जेएएफ – सेफ एप्प: पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में कीट और रोग प्रबंधन के लिए एक गाइड	एस. सतपथी, बी. एस. गोटयाल, आर. के. डे एवं उत्कर्ष पाण्डेय	18
6	पटसन के आनुवांशिक विविधता में वृद्धि हेतु आण्विक तकनीकें	प्रतीक सत्या, दीपनारायण साहा, शुभोजित दत्ता, सोहम राय, विकास मंगल एवं जितेंद्र कुमार मीना	20
7	विभिन्न क्षेत्रों में सूक्ष्मजीवी मिश्रण (क्रिजैफ सोना) द्वारा पटसन सड़न : एक संकलित अनुभव	बिजन मजुमदार, एस. के. झा एवं आर. के. नायक	25
8	कृषि आय दोगुनी करने के लिए स्वयं सहायता समूह के माध्यम से पटसन आधारित हस्तशिल्प की भूमिका	एम. एल. राय, षम्ना ए., एम. एस. बेहरा एवं एस. सतपथी	28
9	फ्लैक्स:- भारत की एक उभरती हुई उच्च गुणवत्तायुक्त संभावित रेशा फसल तथा इसकी सस्य पद्धतियाँ	एस. के. पाण्डेय, दीपनारायण साहा, जीबन मित्र एवं विकास मंगल	31
10	रोग मुक्त पटसन बीज उत्पादन	एस. के. सरकार	35
11	सनई के विविध और पर्यावरण हितैषी उपयोग	हेम राज भण्डारी, मारुति आर. टी. एवं शिव कुमार	38
12	पटसन क्षेत्र के द्वारा उत्पादकता और कृषि आय बढ़ाने के लिए सरकारी योजनाएं और कार्यक्रम	जितेंद्र कुमार मीना, षम्ना ए., लक्ष्मी शर्मा, राकेश रोशन एवं अनिल कुमार	41
13	पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखने में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों की भूमिका	विकास मंगल, ए. के. सिंह, जितेंद्र कुमार मीना एवं सुमन राय	44
14	रेमी रेशा : गुणवत्ता पूर्ण कपड़े बनाने के लिए अनुकूल रेशा	काजल दास एवं मोनू कुमार	46
15	पटसन में पीली मकड़ी की समस्या और इसके प्रबंधन की संभावनाएं	एस. सतपथी, बी. एस. गोटयाल, वी. रमेश बाबू एवं विकास मंगल	48

प्राकृतिक रेशा फसलों के अनुसंधान और विकास में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान की भूमिका: संभावनाएं और चुनौतियां

गौरांग कर

निदेशक, भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली (एन.ए.आर.एस.) के सबसे पुराने एवं प्रमुख अनुसंधान संस्थानों में से एक है, जो पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों के सभी पहलुओं पर बुनियादी, रणनीतिक, अग्रिम और अनुप्रयुक्त अनुसंधान का संचालन करता है। यह संस्थान नयी प्रौद्योगिकियों के विकास और इस क्षेत्र में समस्या को सुलझाने के लिए उत्पादों को बढ़ावा देने के साथ-साथ बदलते परिदृश्य के प्रति सतर्क और उत्तरदायी है । 1936 में भारतीय केन्द्रीय पटसन समिति (आई.सी.जे.सी) की स्थापना के साथ संस्थान का कामकाज शुरू किया गया था। इसके बाद पटसन कृषि अनुसंधान प्रयोगशाला (जे.ए.आर.ल.) की स्थापना 1938 में ढाका (बांग्लादेश) में हुई थी जिसे बाद में 1948 में पश्चिम बंगाल के चिनसुरा में स्थानांतरित कर दिया गया और फिर बैरकपुर में स्थापित किया गया और अंत में 1953 में वर्तमान स्थान (नीलगंज, बैरकपुर) में पटसन कृषि अनुसंधान संस्थान (जे.ए.आर.आई.) के रूप में स्थापित किया गया। आई सी जे सी को 1966 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (भा.कृ.अनु.प.) ने अपने अधिकार में ले लिया। संस्थान को जनवरी, 1990 में अपने वर्तमान नाम केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, (क्रिजैफ) से नामित किया गया।

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों पर अनुसंधान और उनके बीज उत्पादन के लिए चार अनुसंधान केन्द्र (1) रेमी अनुसंधान केन्द्र, सरभोग, असम (1959 में), (2) सीसल अनुसंधान केन्द्र, बामरा, ओडिशा (1962 में), (3) सनई अनुसंधान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश (1963 में) और (4) केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा बीज अनुसंधान केन्द्र, बुदबुद, पश्चिम बंगाल (1956 में) स्थापित किए गए।

रेमी अनुसंधान केन्द्र, सरभोग, असम

भा.कृ.अनु.प.-के.प.स.रे.अनु.सं. के रेमी अनुसंधान केन्द्र की स्थापना सरभोग, असम में 1959 में 56 हेक्टेयर क्षेत्र क्षेत्रफल में की गई थी। यह केन्द्र रेमी की फसल जो कि उत्तर-पूर्व के राज्यों के लिए बहुत विशिष्ट है की खेती के लिए बेहतर तकनीक के विकास में लगा हुआ है।

रेमी अनुसंधान केन्द्र, सरभोग, असम

सीसल अनुसंधान केन्द्र, बामरा, ओडिशा

1962 में बामरा, ओडिशा में सीसल अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की गई थी। इस केन्द्र में सीसल जननद्रव्य ब्लॉक, मॉडल नर्सरी और बागान को बनाए रखा जाता हैं। इस केन्द्र के पास सीसल फसल पर अनुसंधान और प्रक्षेत्र परीक्षण के लिए 103.60 हेक्टेयर क्षेत्रफल भूमि उपलब्ध है।

सीसल अनुसंधान केन्द्र, बामरा, ओडिशा

सनई अनुसंधान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश

1963 में भारतीय केन्द्रीय जूट समिति (आई.सी.जे.सी) की सिफारिश पर सनई अनुसंधान केन्द्र को प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश में स्थापित किया गया था। केन्द्र 1974 में अपने वर्तमान परिसर में चला गया। इस केन्द्र में सनई के साथ साथ फ्लैक्स मे फसल सुधार, बीज और रेशा उत्पादन तकनीक पर अनुसंधान किया जाता है। इसका क्षेत्रफल 9.18 हेक्टेयर है, जिसके परिसर में एक अनुसंधान प्रक्षेत्र, प्रयोगशाला, कार्यालय और कर्मचारी निवास शामिल है।

सनई अनुसंधान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश

केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा बीज अनुसंधान केन्द्र, बुदबुद, पश्चिम बंगाल

केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा बीज अनुसंधान केन्द्र (सीएसआरएस- जेएएफ) जिसे पहले केन्द्रीय नाभिकीय पटसन बीज़ मल्टीप्लिकेशन फार्म के रूप में जाना जाता था, की स्थापना 1962 में बुदबुद, पूर्व बर्दवान, पश्चिम बंगाल में की गई थी। इस केन्द्र के पास 65

हेक्टेयर अनुसंधान प्रक्षेत्र है जो कि मुख्य रूप से रखरखाव, प्रजनन के माध्यम से पटसन और समवर्गीय रेशों मे नाभिकीय बीज, प्रजनक बीज एवं गुणवत्ता बीज (आधारीय, प्रमाणित और टी.एल.) का उत्पादन करता है।

केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा बीज अनुसंधान केन्द्र, बुदबुद

पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका हैं। हमारे देश के लोगों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वानस्पतिक रेशों के रूप में निर्माण करते हैं इसके अलावा बड़े पैमाने पर रोजगार पैदा करते हैं और रेशा आधारित निर्यात के साथ राष्ट्रीय कोष में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

पटसन, "भारत का सुनहरा रेशा", हालांकि सकल फसली क्षेत्र के केवल 0.42% क्षेत्रफल में लगाया जाता है इसके बावजूद यह 40 लाख से अधिक परिवारों को आजीविका प्रदान करता है। यह औद्योगिक क्षेत्र के अन्य 10 लाख लोगों को प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार भी प्रदान करता है। पटसन उद्योग प्रति वर्ष 6500 करोड़ रुपये का माल तैयार करता है और लगभग 2273 करोड़ रु प्रति वर्ष का निर्यात करने में योगदान देता है। कच्चे पटसन का वर्तमान बाजार मूल्य इस समय 4000 प्रति क्विंटल रुपये से अधिक चला गया है जिसने भारत में पटसन की खेती के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया है। निर्यात बाजार को बढ़ाने के लिए अब गुणवत्ता वाले रेशे के अनुसंधान और विकास पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है ताकि इनका उत्पाद गुणवत्ता और कीमत दोनों के संदर्भ में संश्लेषित रेशों के साथ प्रतिस्पर्धा कर सके। रेशा आधारित वस्तुओं के निर्यात के माध्यम से बड़े पैमाने पर रोजगार पैदा करने और राष्ट्रीय कोष में महत्वपूर्ण योगदान देने के अलावा रेशा फ़सलों में पारिस्थिकी तंत्र को संतुलित बनाये रखने मे, कार्बन पृथक्करण, मिट्टी के कटाव को रोकना आदि में भूमिका प्रदान करने की क्षमता है। ये रेशे जैव अपघटनीय हैं और धीरे-धीरे प्लास्टिक या संश्लेषित रेशों को प्रतिस्थापित कर सकते हैं और वातावरण को स्वच्छ और स्वस्थ बनाने मे सहयोग करेंगे। इसे भारत सरकार की एक पहल "स्वच्छ भारत" से भी जोड़ा जा सकता है।

पटसन और सीसल आधारित उत्पादों के माध्यम से कई उद्योगों जैसे कि फर्नीचर, ऑटोमोबाइल, विमानन और रेलवे इत्यादि में लकड़ी को प्रतिस्थापित किया जा सकता है। सनई के पास कागज विनिर्माण उद्योगों में लुगदी के रूप में उपयोग करने की क्षमता है जिसकी सहायता से वन वृक्षों को बचाया जा सकता है और उनकी कटाई को भी रोका जा सकता है। खेतों मे काम करने वाली महिलाओं मे पटसन विविध उत्पादों और हस्तशिल्पों की उद्यमशीलता के विकास से उनका आर्थिक सशक्तीकरण होगा और किसानों की आय भी दोगुनी होगी।

भारत सरकार के कुछ हालिया प्रयासों जैसे अनिवार्य पैकेजिंग अधिनियम, 'एकल उपयोग प्लास्टिक' पर प्रतिबंध लगाने की नीति, पटसन पर प्रौद्योगिकी मिशन का शुभारंभ, प्रति वर्ष पटसन के संशोधित न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा, निश्चित रूप से पटसन क्षेत्र के विकास को गति प्रदान करेगी। भारत सरकार की पहल "स्वच्छ भारत कार्यक्रम" और उपभोक्ताओ में जैव अपघटनीय उत्पादों के अधिक से अधिक उपयोग के प्रति जागरूकता बाजार मे पटसन-आधारित उत्पादों की मांग को बनाए रखेगा।

संस्थान ने पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों की 50 से अधिक किस्मों को विकसित करने और लोकप्रिय बनाने में प्रमुख भूमिका निभाई है जिससे उत्पादन की अवधि काफी कम ही गई है जो विभिन्न फसल प्रणाली में आसानी से समायोजित हो जाती है। इसके अलावा संस्थान ने फसल उत्पादन और संरक्षण से संबंधित महत्वपूर्ण तकनीकों का विकास, सड़न तकनीक में सुधार, रेशा निष्कर्षण और अंतर्वर्ती परिचर्या और बीज उत्पादन के लिए बेहतर मशीनरी का निर्माण किया है। यह संस्थान पटसन जीनोमिक अनुसंधान संबंधित डेटाबेस के रख-रखाव तथा सम्बंधित जननद्रव्य के संग्रहण में भी अग्रणी है।

संस्थान की बहु-विभागीय वैज्ञानिक टीम उच्च मूल्य विविध उत्पादों को बनाने की आवश्यकता को पूरा करने हेतु गुणवत्ता युक्त रेशों पर कार्य कर रही है और रेशों के पारंपरिक उपयोग से हटकर कई अन्य पहलुओं जैसे दवा, पौष्टिक-औषधी और विविध व्यावसायिक उपयोगों पर भी ध्यान है। शोध में कागज उद्योग के लिए उपयुक्त गुणवत्ता वाले लुगदी के लिए उन्नत अल्फा-सेल्युलोज सामग्री के साथ सनई के अधिक बायोमास का उत्पादन करने पर जोर दिया गया है। इस तरह वन वृक्षों को बचाया जा सकता है जो पहले पारंपरिक रूप से कागज के लुगदी उत्पादन के लिए उपयोग किए जाते थे। इसी तरह रेमी और फ्लैक्स जैसी रेशा फसलों में भी इतनी क्षमता है कि इनमें अनुसंधान और विकास के द्वारा वस्त्र क्षेत्र के लिए आवश्यक उच्च गुणवत्ता वाले कपड़ों की आवश्यकता को पूरा किया जा सकता है। सीसल और पटसन के रेशे अपनी अधिक शक्ति और टिकाऊपन के कारण रस्सियाँ बनाने मे, भू-वस्त्र और औद्योगिक वस्त्रों के निर्माण के लिए संभावित कच्चे माल के रूप मे उपयोग किए जा सकते हैं। ये फ्लोएम आधारित जैव अपघटनीय प्राकृतिक रेशे एकमात्र विकल्प हैं जो संश्लेषित रेशों के उपयोग को कम करके पर्यावरण को बचा सकते हैं। संस्थान द्वारा किया गया रेमी और सीसल आधारित कृषि प्रणाली का विकास न केवल मिट्टी का संरक्षण करता है, बल्कि देश की बंजर और सीमांत जोत वाले आदिवासी किसानों की आजीविका को भी सुरक्षित करता है।

मिशन

एक जीवंत, प्रभावी रूप से उत्पादक, पटसन और समवर्गीय रेशों की कृषि के लिए प्रौद्योगिकी विकास, संवर्धन और नीतिगत मार्गदर्शन के लिए विज्ञान के पारंपरिक और नए क्षेत्रों का पता लगाना

विजन

पटसन और समवर्गीय रेशों की खेती को लाभदायक और टिकाऊ

बनाने के लिए अनुसंधान और प्रौद्योगिकी विकास में नेतृत्व प्रदान करना।

अधिदेश

• जैविक और अजैविक दबाव, उपज और गुणवत्ता के लिए पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों के सुधार पर बुनियादी और रणनीतिक अनुसंधान।
• आर्थिक रूप से व्यवहार्य और टिकाऊ उत्पादन तकनीक, फसल प्रणालियों और फसल कटाई उपरांत की तकनीक का विकास।
• उन्नत किस्मों और तकनीकी को विकसित करने के लिए राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मुद्दों पर कार्यरत अनुसंधान का समन्वय और निगरानी।
• तकनीकी और क्षमता निर्माण का प्रसार

वाणिज्यिक महत्व के हिसाब से सभी पटसन एवं समवर्गीय रेशों में मेस्ता, सनई, रेमी, सीसल एवं फ्लैक्स महत्वपूर्ण है। इसकी खेती पूर्वी भारत के ग्रामीण हिस्सों में करीब 100 लाख मानव श्रम दिवस के रोजगार सृजन द्वारा भारतीय अर्थव्यवस्था में मुख्य भूमिका निभाती है। यह प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से उद्योग क्षेत्र में 10 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करता है। पटसन उद्योग प्रति वर्ष 6,500 करोड़ रुपया का पटसन उत्पाद तथा निर्यात द्वारा 2,122 करोड़ रुपया प्रति वर्ष अर्जित करता है। विश्व के कुल कच्चे पटसन का 60 प्रतिशत हिस्सा भारत में उत्पादित होता है। पटसन उत्पादन का कार्य कुल कृषित भूमि के 0.42 प्रतिशत हिस्से में किया जाता है। पिछले कई दशकों से पटसन का क्षेत्रफल 9 लाख हेक्टेयर के आस-पास स्थिर है। कच्चे पटसन की औसत उत्पादकता 23 क्विंटल/ हेक्टेयर के साथ इसका कुल उत्पादन 100 लाख बेल्स (180 कि.ग्रा./ बेल) है। वैश्विक स्तर पर 30 लाख टन में विकासशील देशों का योगदान 29.9 लाख टन (99.97%) है। देश में पश्चिम बंगाल की उत्पादकता (27 क्विंटल/ हेक्टेयर) सर्वाधिक है जब कि यह अन्य राज्य असम, ओडिशा तथा बिहार में क्रमशः 19,18 तथा 16 क्विंटल/ हेक्टेयर है। पिछले 50 वर्षों में पटसन एवं मेस्ता के उत्पादकता में दोगुनी वृद्धि हुई है। ऐसा मौजूदा फसल पद्धति में अच्छे से समायोजित होने वाले कम अवधि में अधिक उपज तथा पूर्व पुष्पण प्रतिरोधी प्रजाति के कारण संभव हो पाया है।

हालांकि प्राकृतिक रेशा के लाभ के बारे में जागरूकता बढ़ी है परन्तु मुख्य चिंता मानव निर्मित संश्लेषित रेशों (6%) की तुलना में पटसन क्षेत्र (4%) की धीमी विकास दर है। पिछले दो दशकों में प्राकृतिक रेशा की हिस्सेदारी में 50 प्रतिशत की कमी हुई है जिसकी भरपाई मानव निर्मित (संश्लेषित) रेशों की हिस्सेदारी में 50 प्रतिशत बढ़ोतरी के साथ हुई है जबकि वैश्विक बाजार में पटसन आधारित विविध उत्पादों जैसे- जियो-पटसन का प्रसार तेज गति से हो रहा है।

लुगदी एवं कागज उद्योग की बढ़ती हुई माँग को ध्यान में रखते हुये अनुसंधान का कार्य उन प्रजातियों पर ज्यादा केन्द्रित होना चाहिए जिसमें बायोमास का अधिकतम उत्पादन हो। इस तरह वनों/वृक्षों की कटाई में निश्चित तौर पर कमी के साथ-साथ पर्यावरण का भी संरक्षण हो सकेगा। पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसल की उत्पादकता को बदलते जलवायु परिवेश, घटते फसल की जोत, प्राकृतिक रेशा के विविध उत्पादों की बढ़ती माँग, निर्यात का बेहतर अवसर के परिपेक्ष में कायम रखते हुए बढ़ाना अपने आप में एक चुनौती है। समवर्गीय रेशा की भागीदारी बढ़ाने हेतु उन्नत प्रवर्धन तथा उत्पादन विधियों के साथ- साथ बेहतर गुणवत्ता वाले नये प्रजातियों की खोज के लिये संगठित प्रयास आवश्यक है।

हाल के वर्षों में पटसन एवं समवर्गीय रेशों के मुख्य तथा गौण उत्पादों के उपयोग में एक जबरदस्त परिवर्तन आया है। मूल्य वर्धित उत्पाद बनाने हेतु महीन रेशा, जिसकी मजबूती ज्यादा हो, की माँग काफी अधिक होती है। मेस्ता की अधिक बायोमास देने वाली प्रजातियाँ लुग्दी एवं कागज उद्योग के लिये सर्वोत्तम होती हैं। सनई रेशा में अधिक अल्फा सेल्युलोज की मात्रा के साथ- साथ बहुलकीकरण का स्तर, उच्च गुणवत्ता वाले कागज निर्माण हेतु उपयुक्त होते हैं।

रेमी रेशा अपनी महीनता एवं मजबूती के कारण पोशाक, वस्त्र तथा बायो– कम्पोजीट उत्पादन के लिये उपयुक्त हैं। बड़े पैमाने पर सीसल से वस्त्र, जियो- टेक्सटाइल्स, बायो - कम्पोजीट तथा फ्लैक्स से उच्च गुणवत्ता वाला रेशा तथा कागज बनाया जा सकता है। वर्तमान में इन रेशों का अधिकांश भाग आयात किया जाता है। समन्वित शोध प्रयास द्वारा समवर्गीय रेशों की उत्पादकता में बढ़ोतरी मुख्य प्राथमिकताओं में से एक है।

पटसन एवं समवर्गीय रेशों के विकास में मुख्य अवरोध संश्लेषित रेशों द्वारा उत्पन्न प्रतिस्पर्धा, बदलते जलवायु परिवेश, कृषि श्रमिकों की अनुपलब्धता, गुणवत्तापूर्ण बीज/प्रवर्धन सामग्री की अनुपलब्धता आदि है। इन का विविध उपयोग ज्यादा फायदेमंद साबित होगा क्योंकि इसमें मूल्य वर्धन होता है। भविष्य की चुनौतियों को ध्यान रखते हुए इस क्षेत्र की शोध के उद्देश्य निम्न है –

भा.कृ.अनु.प.-के.प.स.रे.अनु.सं. की अधिदिष्ट फसलों (पटसन, मेस्ता, सनई, सीसल, रेमी, फ्लैक्स) की उपयोगिता

पर्यावरण के बारे में बढ़ती चिंता के कारण पेट्रो-उत्पादों की जगह अब जैव-नष्ट होने योग्य उत्पाद और उपयोगकर्ता के अनुकूल प्राकृतिक उत्पादों को वैश्विक प्राथमिकता दी जा रही है। इसी दिशा में कई निजी उद्योग कृत्रिम उत्पादों के उपयोग को कम करने के लिए पटसन उत्पादों के विकास और निर्माण के लिए कदम उठा रहे हैं। पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों के उल्लेखनीय गुणों एवं भविष्य के लिए इन फसलों के विविध औद्योगिक संभावनाओं के कारण इसके नए आयाम दिखाई दे रहे हैं।

पटसन: कच्चे पटसन (पटसन और मेस्ता एक साथ) का उपयोग पारंपरिक रूप से 60% सैकिंग और लगभग 20% से अधिक हेसियन के निर्माण के लिए किया जाता है जो कि कुल पटसन के सामान के उत्पादन का 16 लाख टन है। यदि दुनिया भर में 10% कृत्रिम सामान के थैला को पटसन के थैला से बदल दिया जाता है तो भारत और बांग्लादेश में उत्पादित पटसन रेशा की पूरी मात्रा का उपयोग उक्त उद्देश्य के लिए किया जा सकता है। विविध उपयोगों के लिए प्राकृतिक रेशा की मांग तीव्र गति से बढ़ रही है। वर्तमान में पटसन विविध उत्पादों का हिस्सा पटसन के सामानों के कुल निर्यात मूल्य

का लगभग 25% है। यह स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि पटसन विविध उत्पादों से पटसन खेती के साथ-साथ पटसन उद्योगों को भी लंबे समय तक बनाए रखा जा सकता है। जियो-पटसन के लिए विश्व बाजार तेजी से बढ़ रहा है और वर्तमान में विभिन्न भू-टेक्सटाइल के प्रयोग के लिए पटसन की खपत 1.5 और 2 मिलियन टन के बीच होती है जो कुल मांग के 1% से कम है।

सनई: सनई रेशा मुख्य रूप से कॉर्डेज, मछली पकड़ने के जाल, रस्सियों, सुतली, हस्तनिर्मित कागज और टाट पट्टी बनाने के लिए के लिए स्थानीय कुटीर उद्योग में उपयोग किया जाता है। इसमें सोफा कवर, फ्लोर मैट और अन्य मोटे उत्पादों का उत्पादन करने के लिए अलग-अलग अनुपात में कपास के साथ मिश्रण करने की व्यापक गुंजाइश है। सेल्युलोज की उच्च सामग्री इसे गुणवत्ता वाले कागज की तैयारी के लिए उपयुक्त बनाती है।

रेमी : रेमी दुनिया में सबसे मजबूत एवं बेहतरीन प्राकृतिक रेशा में से एक है जो पौधे की छाल से प्राप्त होता है। रेशा में परिधानों के विनिर्माण के लिए और विविध वस्तुओं के उत्पादन के लिए प्राकृतिक और अन्य कृत्रिम रेशा के साथ सम्मिश्रण की बहुत गुंजाइश है। अपशिष्ट रेशा का उपयोग मुद्रा नोटों और सिगरेट के कागजों के निर्माण के लिए किया जा सकता है जबकि लकड़ी के हिस्से का उपयोग कई अन्य जैव-अपघट्य उत्पाद जैसे प्लाईवुड, पार्टिकल बोर्ड, रेशा बोर्ड आदि के उत्पादन के लिए किया जाता है। रेमी की व्यावसायिक क्षमता के बावजूद इसकी खेती केवल उत्तर पूर्वी राज्यों में विशेष रूप से असम में केंद्रित है। नतीजतन, भारत को कपड़ा क्षेत्र में घरेलू माँग को पूरा करने के लिए रेमी रेशा का आयात करना पड़ता है। इसलिये रेमी रेशा उत्पादन तकनीक को प्रचार-प्रसार के माध्यम से पारंपरिक और गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में बढ़ाना आवश्यक है।

सीसल: सीसल की पत्तियों से एक मजबूत रेशा है, जो परंपरागत रूप से रस्सियों, डोरियों और जहाज के लंगर बनाने में उपयोग किया जाता है। पारंपरिक उपयोग के अलावा इसके कम घनत्व, उच्च शक्ति और जैव विघटनशील होने के कारण इस रेशे का उपयोग पर्यावरण अनुकूल सामग्रियों के निर्माण में हो रहा है।

फ़्लैक्स: विश्व में वाणिज्यिक रूप से उगाई जाने वाली रेशा फसलों में फ्लैक्स चौथे स्थान पर है लेकिन वस्त्र निर्माण में इसके रेशे कपास से बेहतर होते हैं| फ्लैक्स के रेशे काफी महीन, मजबूत और स्थायित्व वाले होते हैं। कपास और पटसन की तुलना में फ्लैक्स का रेशा चमकदार, मजबूत, कम खिंचाव वाला और अधिक टिकाऊ होता है और पर्यावरण में होने वाले परिवर्तन के कारण इसमे कोई बदलाव नहीं होता है। फ्लैक्स के रेशे का ज्यादा उपयोग नॉन – वोवेन्स बनाने के लिए किया जाता है क्योंकि पारंपरिक प्रसंस्करण के पश्चात रेशे की शुद्धता और लंबाई में कमी हो जाती है। नॉन – वोवेन्स सामग्री में रेशा प्रचलित कंपोजिट, भू टेक्सटाइल, फिल्टर, अवशोषक, लुगदी और कागज आते हैं। वर्तमान में फ्लैक्स रेशे का उपयोग बेल्जियम, रूस, स्विटजरलैंड, ब्राजील, इंग्लैंड, फ्रांस और अर्जेंटीना आदि देशों में लिनेन नामक उत्तम गुणवत्ता वाले कपड़े बनाने में किया जाता है।

भारत में लिनन कपड़ों के निर्माता यूरोपीय देशों से प्रति वर्ष लगभग 60 करोड़ रुपये के फ्लैक्स रेशे का आयात करते हैं और भारत में पैदा होने वाले फ्लैक्स रेशे का उपयोग नहीं करते हैं। भारतीय रेशे यूरोपीय देशों से आयातित रेशे के मुक़ाबले निम्न स्तर का होता है। ऐसा इसलिए क्यों कि भारत द्वारा विकसित किए गए प्रजाति या तो तेल (अलसी) के लिए या फिर दोहरे उद्देश्य (तेल + रेशा) वाले हैं। वैश्विक निर्यात, बाजार में हिस्सेदारी और घरेलू खपत में वृद्धि के लिए इसके भविष्य की विपणन नीतियों को इस तरह बनाया जाना चाहिए ताकि बाज़ार में पहले से ही सिंथेटिक्स द्वारा बनाए गए स्थान / हिस्सेदारी का मुकाबला करते हुए इसे बढ़त मिले। इस उद्देश्य के लिए नीचे कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए गए हैं:

1. निर्यात द्वारा आय को बढ़ाने के लिए एवं विपणन प्रयासों में तेजी लाने के लिए अनुसंधान प्रयासों के स्तर में बढ़ोतरी तथा उत्पाद विविधीकरण पर ज़ोर दिया जाना चाहिए।
2. इस समय प्राथमिकता वाले विविध पटसन उत्पाद जैसे यार्न, शॉपिंग बैग, कैरी बैग, हेसियन, खाद्यान बैग, पटसन मिश्रित कारपेट, दरी, गिफ्ट सामान, दिनचर्या में काम आने वाले उत्पाद इत्यादि के बाज़ार का विकास और इसको बढ़ावा देने के तरीकों पर विचार की आवश्यकता है।
3. निकट भविष्य में इस सूची में नए उत्पादों को भी शामिल किए जाने की उम्मीद है। ऐसी उम्मीद है कि बहुत जल्द ही पटसन भू-टेक्सटाइल को एक बड़ा बाजार मिले। कागज और लुगदी के लिए कच्चे पटसन का बहुत बड़ा बाजार विकसित हो सकता है।
4. गुणवत्ता वाले यार्न, समवर्गीय रेशा मिश्रित पटसन यार्न, पटसन जियोटेक्सटाइल और खाद्यान उपयुक्त पटसन (जो हाइड्रोकार्बन मुक्त हो) का घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में काफी माँग हैं। दरी, कपड़े और अन्य विविध उत्पादों आदि के निर्माण के लिए महीन रेशा के अनुसंधान व विकास में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

संश्लेषित भू-टेक्स्टाइल और पटसन भू-टेक्सटाइल के प्रतिस्पर्धा में पर्यावरण अनुकूलन गुणों एवं मूल्य के कारण पटसन भू-टेक्सटाइल का पलड़ा भारी रहता है। सिविल इंजीन्यरिंग के क्षेत्र, सड़क व रेलवे के तटबंधों में इनका उपयोग तथा नदियों के तटीय कटाव और भू-क्षरण के समस्याओं से निपटने में ये काफी प्रभावी हैं। भू टेक्सटाइल का संस्थागत उपयोग के रूप में भविष्य देखा जा रहा है।

पर्याप्त मात्रा में उच्च गुणवत्तायुक्त रेशा मांग को पूर्ण करने हेतु संस्थान की आगामी पांच वर्षों की अनुसंधान प्राथमिकताएं:

उन्नत किस्मों का विकास

- 5-10% उच्च रेशा उपज वाली पटसन एवं समवर्गीय रेशा किस्मों का विकास
- विविध उत्पादों के लिए उपयुक्त किस्मों का विकास
- महीन रेशा गुणवत्ता वाली किस्मों का विकास
- वैकल्पिक उपयोग जैसे कागज लुगदी, भू टेक्सटाइल, जैव-ईंधन आदि हेतु अनुकूल किस्मों का विकास

जननद्रव्यों में वृद्धि

- वर्तमान में, भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों की लगभग 5000 जननद्रव्यों का मध्यम जीन पूल मौजूद है जिसमें 5-10% तक की वृद्धि आवश्यकता है। भारतवर्ष के अब तक अनवेषित क्षेत्रों तथा विशेष रूप से इनके उदगम केन्द्रों से विदेशी जननद्रव्यों के संग्रहण को सर्वोच्च प्राथमिकता देने की आवश्यकता है।

जैव प्रौद्योगिकी और आण्विक जीव विज्ञान

- ज्वलंत अनुसंधान मुद्दों जैसे - i) रेशे में लिग्निन की मात्रा को कम करना ii) रेशे की महीनता तथा मजबूती में वृद्धि iii) जैविक तथा अजैविक दबाव के लिए प्रमुख जीनों / क्यूटीएल की पहचान iv) पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसल जननद्रव्यों की फिंगरप्रिंटिंग आदि के निराकरण हेतु नवीनतम आण्विक तकनीकों के उपयोग के माध्यम से पटसन एवं समवर्गीय रेशा फ़सलों में व्यवस्थित बुनियादी अनुसंधान की आवश्यकता है।

जैविक और अजैविक दबाव का प्रबंधन

- कीट एवं रोगों, विशेष रूप से तना सड़न रोग कॉम्प्लेक्स के प्रति स्वप्रतिरोधिता बढ़ाने के उद्देश्य से एंडोफाइट्स तथा जैव-नियंत्रण तकनीकों का समावेश; कीटों एवं बीमारियों के पूर्वानुमान का उपयुक्त मॉडल विकास तथा कीटों के व्यवहार प्रबंधन हेतु फेरोमोन प्रणालियों का प्रयोग पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में जैविक एवं अजैविक दबावों के प्रबंधन में प्रभावकारी सिद्ध हो सकते हैं।
- खरपतवार नियंत्रण हेतु पर्यावरण अनुकूल तथा लागत प्रभावी तकनीकों का विकास।
- पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में जल जमाव एवं सूखा प्रबंधन हेतु - i) प्रतिरोधी किस्मों का विकास तथा ii) प्रभावी जल निकासी के लिए भूमि सतह का समतलिकरण तथा *इन-सीटू* जल संरक्षण।

उच्च रेशा गुणवत्ता हेतु उन्नत सड़न तकनीक

- मौजूदा माइक्रोबियल कंसोर्टियम "क्राईजैफ सोना" में गुणात्मक सुधार के साथ-साथ इसके वितरण प्रणाली को और अधिक आसान एवं सुगम बनाना।
- कम मात्रा मे पानी का उपयोग कर पटसन में *इन-सीटू* सड़न तकनीकी का मानकीकरण।

प्रक्षेत्र यांत्रिकीकरण

- विद्युत संचालित पटसन रिबनर, मानव तथा विद्युत संचालित रेशा निष्कर्षण तथा बहु-पंक्ति बहु-फसली बीज बुवाई यंत्रों का विकास।

गैर परंपरागत क्षेत्रों में गुणवत्ता पूर्ण बीज उत्पादन

- पूर्वी भारत के शुष्क क्षेत्रों में गुणवत्तायुक्त पटसन बीज उत्पादन के लिए उपयुक्त क्षेत्रों की पहचान तथा स्थानीय मांग का कम से कम 10% बीज उपलब्धता बनाए रखने हेतु स्थान विशिष्ट बीज उत्पादन तकनीकों का विकास।

2. सीसल

- क्लोनल चयन अथवा अंतर-प्रजातीय संकरण के माध्यम से उच्च उपज वाली किस्मों का विकास।
- सीसल की मौजूदा कृषित क्षेत्रो में 10-15% की वृद्धि हेतु शस्य विधाओं में व्यापक सुधार के माध्यम से सीसल की रोपण सामग्री (बुलबिल्स और सकर) के उत्पादन को बढ़ाना।
- फसल सुधार तथा उत्पादन प्रौद्योगिकियों के माध्यम से सीसल की उत्पादकता में प्रभावी सुधार लाना।
- शुद्ध आय में वृद्धि हेतु सीसल आधारित समन्वित कृषि प्रणाली का विकास।

3. सनई

- संभावित और वास्तविक पैदावार के अंतर को पाटने हेतु उच्च उत्पादन क्षमता वाली प्रजातियों के साथ-साथ सनई की उन्नत उत्पादन तकनीकों का विकास।
- सनई की नवीनतम विमोचित किस्मों की गुणवत्ता पूर्ण बीज उत्पादन तकनीकों पर जोर देते हुए इसके व्यापक प्रचार एवं प्रसार पर विशेष बल देना।
- गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में सनई की खेती को बढ़ावा देने के लिए उपयुक्त फसल उत्पादन तकनीकों का विकास करना।
- उच्च नोडूलेशन क्षमता वाली सनई की द्वि-उद्देशीय किस्मों का विकास।

4. रेमी

- कम लागत तथा 10% अधिक रेशा निष्कर्षण क्षमता वाली रेशा निष्कर्षण यंत्रों का विकास।
- रेमी में अत्यधिक दक्ष *इन-विट्रो* पुनर्जनन तकनीक तथा आनुवंशिक परिवर्तन प्रोटोकॉल स्थापित करना।
- पूर्वोत्तर क्षेत्र के विभिन्न जिलों में रोपण / उत्पादन तकनीकों का विस्तार तथा कटाई उपरान्त फसल प्रबंधन को बढ़ावा देना।

निष्कर्ष :

पिछले 70 वर्षों के दौरान पटसन बाजार/विपणन ने कीमतों में अनेक उतार- चढ़ाव के अच्छे तथा बुरे दौर देखे हैं। बाजार को स्थिरता प्रदान करने के साथ- साथ पटसन उद्योग के आधुनिकरण हेतु हमेशा से ही विभिन्न चरणों में सरकारी नीतियाँ एवं मदद का प्रयास किया गया परन्तु अपवादस्वरूप कुछ पटसन मिलों को छोड़ कर अधिकतर पुरातन मानसिकता से ग्रसित होने के कारण आगे नहीं आये क्योंकि उन्हें बिना आधुनिकीकरण किये ही सुनिश्चित लाभ मिल रहा था। जाहिर तौर पर, सत्तर के दशक में इस कमी को पूरा करने के लिए पैकेजिंग व्यवसाय में संश्लेषित रेशों का धीरे- धीरे आगमन हुआ। इसकी उपस्थिति व्यापक तौर पर अस्सी के दशक के बाद सीमेंट पैकेजिंग के क्षेत्र में महसूस की गई जिसने पटसन रेशा को पूर्णतया विस्थापित कर दिया। इस पर पटसन उद्योग के उदासीन रवैया ने बाज़ार को अधिक से अधिक कामचलाऊ बना कर बुरी तरह प्रभावित किया है। इस अवस्था में बदलाव हेतु एक नई शुरुआत की आवश्यकता है। पटसन क्षेत्र

को पूरी तरह संरक्षित बाज़ार पटसन पैकेजिंग मेटेरियल्स एक्ट (पैकेजिंग सामग्री के लिए अनिवार्य), 1987 के सहारे नहीं छोड़ा जा सकता है। इसे स्वयं ही संश्लेषित रेशों द्वारा प्रदत्त चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार होना पड़ेगा।

घरेलू एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पटसन बाजार के पुनरुद्धार हेतु सबसे जरूरी बात संश्लेषित रेशों की तुलना में इसके उत्पाद को अंतर्निहित गुणों के कारण सस्ता एवं प्रतिस्पर्धा लायक बनाना होगा जिसके लिए पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान को विकास से जुड़े संस्थाओं के साथ ताल-मेल को बेहतर एवं मजबूत करने की आवश्यकता है। एक समग्र प्रयास के तहत पटसन की खेती में सुधार तथा कृषक समुदाय को लाभान्वित करने के मूल उद्देश्य से क्रिजैफ ने कृषक तथा उद्योग एवं संबद्ध संस्थाओं के साथ कार्य करने पर ध्यान केन्द्रित किया है। संस्थान के वैज्ञानिकों का एक समर्पित समूह (बहु – विषयक) उच्च गुणवत्ता वाला रेशा के विकास पर कार्य कर रहा है जिससे महँगे मूल्य वर्धित उत्पादों को बनाया जा सकता है। इसके अलावा गैर - पारंपरिक लक्ष्य केन्द्रित जैसे – दवाओं, पौष्टिक औषधीय पदार्थों और वाणिज्यिक उपयोग पर भी कार्य किया जा रहा है।

भारतीय अर्थव्यवस्था में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों का महत्व

एस. के. झा, शैलेश कुमार, एस. सरकार एवं आर. के. नायक
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसल राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में एक अहम भूमिका निभाते हैं क्योंकि हमारे देश के लोगों की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा करने के अलावा बड़े पैमाने पर रोजगार पैदा करते हैं और रेशा निर्मित विविध उत्पादों का निर्यात कर राष्ट्रीय कोष में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलें कपास के बाद औद्योगिक एवं वाणिज्यिक रूप से महत्वपूर्ण फसलें है। पटसन में दो फसल (कोरकोरस के दो प्रजाति कैप्सूलेरिस एवं ओलिटोरियस) तथा मेस्ता (हिबिस्कस के दो प्रजाति रोजेल एवं केनाफ) सम्मिलित हैं। समवर्गीय रेशा फसलों के अंतर्गत अलसी, सनई, सीसल एवं रेमी आते हैं। वर्तमान में उपलब्ध आँकड़ों के हिसाब से इन रेशा फसलों में सबसे ज्यादा पटसन की खेती लगभग 7.5 लाख है. क्षेत्रफल में की जाती है। इसके बाद अलसी या फ्लैक्स (4.368 लाख है.), सनई (30,000 है.), सीसल (24,000 है.) एवं रेमी (100 है.) का स्थान आता है। इनमें प्राकृतिक रेशा के उत्पादन की विभिन्न गतिविधि जैसे उत्पादन, रेशा निष्कर्षण, प्रसंस्करण एवं मूल्य वर्धन के द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में आय बढ़ाने हेतु रोजगार सृजन के अनेक अवसर मौजूद हैं।

पटसन एवं मेस्ता (रोजेल एवं केनाफ): पटसन की खेती मुख्यत: पूर्वी और उत्तर पूर्व भारत के राज्यों के लगभग 40 लाख कृषक परिवारों की कृषि आजीविका का मुख्य आधार है तथा कुल कृषि आमदनी में एक तिहाई का योगदान करती हैं। देश के कुल कृषित भूमि में पटसन एवं मेस्ता का योगदान क्रमश: 0.5 तथा 0.1 प्रतिशत है । पटसन के अंतर्गत पश्चिम बंगाल का स्थान उत्पादन तथा क्षेत्रफल के हिसाब से सर्वाधिक है । पटसन की तुलना में मेस्ता एक सख्त फसल है तथा इसकी खेती पटसन के कुल क्षेत्रफल के एक चौथाई भाग में की जाती है तथा इसकी खेती मुख्य रूप से आंध्र प्रदेश में होती है । क्षेत्रफल एवं उत्पादन में इसका योगदान क्रमश: 30 एवं 42 प्रतिशत का है। सामान्यत: इसकी खेती में पटसन की तुलना में कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इसकी खेती वर्षा आधारित क्षेत्रों तथा सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है । यह फसल रेशे (रस्सी, ट्वाइन, रुखड़े वस्त्र) के अलावा अन्य घरेलू उपयोग हेतु जैसे शाक- भाजी, वानस्पतिक तेल, मूल्यवर्धित खाद्य पदार्थों, औषधियों एवं प्राकृतिक रंजक प्रदान करती है। राष्ट्रीय स्तर पर मेस्ता के अंतर्गत रोजेल का क्षेत्रफल (80 प्रतिशत) केनाफ की तुलना में अधिक (शुष्करोधी गुण) है । पेड़ों की तुलना में केनाफ से बने कागज (कम लिग्निन के कारण) में 20 प्रतिशत कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इनकी महत्ता को देखते हुये वर्ष 2009 को 'प्राकृतिक रेशा का अंतर्राष्ट्रीय वर्ष' के रूप में मनाया गया था।

पटसन की खेती, उद्योगों को रेशा के साथ- साथ कृषकों को ईंधन तथा घर निर्माण में प्रयोग होने वाली सामग्री भी उपलब्ध करती है। पटसन की खेती अधिकतर सूखा तुल्य अवस्था में की जाती है। इसके उत्पादक लघु एवं सीमांत वर्ग के किसान होते हैं जिनके श्रम का भरपूर उपयोग इसके निराई एवं रेशा निष्कर्षण में होता है। करीब 20 प्रतिशत भूमि में ही सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है जिसके कारण इसकी उपज एवं गुणवत्ता काफी प्रभावित होती है। वर्तमान में बढ़ती कृषि लागत, सड़न हेतु जल की अनुपलब्धता एवं श्रमिकों की अनुपलब्धता कृषकों के आय पर प्रतिकूल प्रभाव डाल रहे हैं। पटसन रेशा की भविष्य में बढ़ती माँग को पूरा करने हेतु वस्त्र मंत्रालय (भारत सरकार) द्वारा प्रायोजित जूट- आई केयर (JUTE-ICARE) के माध्यम से पटसन उत्पादकों को नवीनतम उत्पादन तकनीक मुहैया करवा रही है। इसके अंतर्गत वर्ष 2019 के दौरान भारत के पाँच राज्यों (पश्चिम बंगाल, बिहार, असम, ओडिशा व मेघालय) के 72 प्रखंडों में करीब एक लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में करीब ढाई लाख पटसन किसानों को लाभार्थी बनाया गया। अन्य समवर्गीय रेशा फसलों पर भी इसी तरह ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है।

पटसन

सीसल

केनाफ़

सनई

पटसन, औद्योगिक प्रसंस्करण तथा व्यवसाय से जुड़े करीब 50 लाख परिवारों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से जीविका प्रदान करता है। प्रत्येक वर्ष पटसन उद्योग करीब 6500 करोड़ रुपये का माल तैयार करता है और इसके निर्यात के द्वारा करीब 2273 करोड़ रुपये का योगदान देता है। इस तरह प्रति वर्ष पटसन निर्मित विविध उत्पादों के निर्यात से करीब 2100-2500 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा अर्जित होती है। विश्व स्तर पर बढ़ती जन-जागरूकता के कारण पटसन एवं पटसन निर्मित विविध उत्पादों के माँग में निरंतर वृद्धि हो रही है जो पटसन कृषि के लिए एक शुभ संकेत है। क्योटो प्रोटोकॉल पर हस्ताक्षर होने के बाद औद्योगिक क्षेत्रों में परंपरागत ईंधन का इस्तेमाल घटाने तथा ऊर्जा के नए एवं गैर परंपरागत स्रोतों का इस्तेमाल शुरू हो चुका है। विश्व बाजार में कार्बन क्रेडिट का क्रय-विक्रय आरंभ हो चुका है। पटसन पौधे के द्वारा कार्बन-डाइऑक्साइड (15 टन/है.) अवशोषित करने की क्षमता अन्य किसी बड़े वृक्ष की तुलना में काफी ज्यादा है। पटसन की खेती करने से 18,000 रुपये/है. के बराबर कार्बन क्रेडिट की आय संभव है। इसकी संगठित खेती के द्वारा हमारे देश के किसान कार्बन क्रेडिट का आर्थिक लाभ उठा सकते हैं।

भारत सरकार की एक एजेंसी भारतीय पटसन निगम (जे.सी.आई.) केवल पटसन एवं मेस्ता रेशों का न्यूनतम समर्थन मूल्य के आधार पर इनकी एक सीमित मात्रा की खरीद करती है जब कि बाकि अधिकतर मात्रा की खरीद असंगठित क्षेत्र के निजी समूहों द्वारा मनमाने कीमत पर की जाती है। हरित क्रांति के समय खाद्यान्न का रिकार्ड स्तर उत्पादन में न्यूनतम समर्थन मूल्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है परंतु इस तरह की सुविधा का अभाव समवर्गीय रेशा फसलों के अंतर्गत आने वाले सीसल, रेमी एवं फ्लैक्स फसलों में है जो इसके उत्पादन करने वाले कृषकों के लिए निराशा एवं अनिश्चितता का भाव उत्पन्न करती है।

फ्लैक्स : वर्तमान में उपलब्ध आकड़ों के हिसाब से देश में अलसी या फ्लैक्स की खेती 4.368 लाख है. क्षेत्रफल में की जाती है जो कि विश्व में प्रथम स्थान पर है । उत्पादन तथा उत्पादकता में विश्व में इसका स्थान क्रमशः चौथा (1.725 लाख टन) और आठवाँ (395 किलोग्राम / है.) है। फ्लैक्स की खेती मुख्य रूप से मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, छतीसगढ़, बिहार, राजस्थान, ओडिशा, महाराष्ट्र एवं कर्नाटक आदि प्रदेशों में रबी के मौसम

फ्लैक्स फसल

की जाती है। इसके कुल उत्पादन का 20 प्रतिशत खाद्य तेल के रूप में तथा 80 प्रतिशत उद्योगों में प्रयोग होता है। फ्लैक्स के तने से बहुमूल्य रेशा प्राप्त होता है जिसे लिनेन कहते हैं। इसके रेशे मजबूत, महीन, दीर्घकाल तक चलने वाले एवं मौसमी उतार-चढ़ाव से अप्रभावित रहते हैं। शत- प्रतिशत पटसन या कपास के बने वस्त्रों की तुलना में फ्लैक्स मिश्रित पटसन या कपास के वस्त्र बेहतर साबित होते हैं।

फ्लैक्स रेशा

उच्च श्रेणी के रेशों को कपास, रेशम एवं ऊनी रेशों के साथ मिला कर उत्तम श्रेणी के वस्त्र बनाए जाते हैं जबकि निम्न श्रेणी के रेशों का उपयोग ट्वाइन, रस्सी, कैनवास एवं विभिन्न प्रकार के कागज (बैंक नोट, प्रयोगशाला, सिगरेट, चाय) में होता है। फ्लैक्स को खाद्यान्न एवं तिलहन फसल चक्र में शामिल करने से कीट एवं रोगों से बचाव होता है तथा लागत कि तुलना में लाभ ज्यादा होता है। देश में लिनेन की माँग पश्चिमी देशों से आयात कर पूरी की जाती है जिसमें काफी विदेशी मुद्रा खर्च होती है। घरेलू स्तर पर अलसी क्षेत्रों को फ्लैक्स क्षेत्र में परिवर्तित कर उच्च गुणवत्ता वाले रेशा का उत्पादन कर विदेशी मुद्रा की बचत की जा सकती है।

सनई: सनई एक दलहनी कुल का सदस्य है और इसकी खेती मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, ओडिशा, राजस्थान, एवं तमिलनाडु में की जाती है। इस फसल को रेशा के अलावा हरी खाद, चारे, जैव ईंधन एवं औषधिय उपयोग आदि के लिए भी उगाया जाता है। इसके रेशे का उपयोग मुख्य रूप से रस्सी बनाने में, चारपाई के लिए बढ़ बनाने में, बैठने के लिए टाट पट्टी बनाने में, मछली पकड़ने का जाल, हस्तशिल्प सामान बनाने में एवं गलीचा बनाने में किया जाता है। इस रेशे की महत्ता का पता इस बात से चलता है कि दूसरे विश्व युद्ध के समय अमेरिका ने जरूरी युद्ध-सामग्री की सूची में इसे शामिल किया था। औद्योगिक स्तर पर सनई से कागज बनाने के शोध कार्यो से यह पता चला है कि आवश्यकतानुसार इसे बार- बार उगा कर कागज निर्माण की माँग को आसानी से पूरा किया जा सकता है।

सीसल: सीसल एक बहुवर्षी रेशा फसल है जिसके लिए बंजर एवं शुष्क भूमि भी काफी उपयुक्त होती है। इसके आर्थिक महत्व को इस बात से समझा जा सकता है कि प्रति क्विंटल सीसल के पत्तों से करीब 30 किलोग्राम रेशा, 1 किलोग्राम हेकोजिन (औषधीय महत्व), 3.75 किलोग्राम मोम तथा 33 किलोग्राम कागज का उत्पादन होता है। सीसल उत्पादन की गतिविधि 113 मानव श्रम दिवस प्रति वर्ष प्रति हेक्टेयर रोजगार उत्पन्न करने में सक्षम है। उदाहरण के तौर पर मध्य प्रदेश में करीब 14.17 लाख हेक्टेयर परती एवं अकृषित बंजर भूमि है जिसमें केवल पाँचवे हिस्से (3.00 लाख हेक्टेयर) को अगर सीसल उत्पादन का लक्ष्य रख कर कार्य किया जाए तो उत्पादन एवं रेशा निष्कर्षण द्वारा 339 लाख मानव श्रम दिवस सृजन किया जा सकता है।

देश के विभिन्न भागों में जनजातीय एवं ग्रामीण समुदाय द्वारा घरों के चारो तरफ सीसल का उपयोग बाड़ा के रूप में तथा भूमि संरक्षण विभाग द्वारा मृदा संरक्षण के लिए किया जाता रहा है। अभी तक संगठित रूप से इसकी खेती पर कम ध्यान दिया गया है क्योंकि शुरुआत के तीन वर्षों तक इसकी बढ़वार धीमी गति से होती है। इस अवधि में सीसल के कतारों (3 मी.) के बीच दलहनी फसलों की अंत: खेती आय बढाने में मददगार होती है। आर्थिक रूप से फायदेमंद खेती के लिए सीसल की जोत कम से कम एक हेक्टेयर होनी चाहिए। सीसल के पूरे जीवन काल में प्रत्येक पौधे से लगभग 300 पत्तियों की प्राप्ति होती है। डिकोर्टिकेटर की सहायता से रेशा का निष्कर्षण (पत्तों से) किया जाता है। इसके रेशे से समुद्री जहाज के लंगर का रस्सा, चटाई, दरी, मछली पकड़ने का जाल, ब्रश, झाड़ू आदि बनाए जाते हैं। तीसरे वर्ष से औसतन 10 क्विंटल रेशा प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष प्राप्त होता है। प्रति हेक्टेयर लगभग 2,50,000 रुपया खर्च करने पर करीब 7,50,000 रुपया का कुल लाभ (सीसल की उत्पादक आयु 12 वर्ष तक) प्राप्त होता है। इसके उत्पादन को बढ़ावा देकर प्रति वर्ष विदेशों से करीब 2,000 टन आयातित सीसल रेशा पर होने वाली विदेशी मुद्रा (US $ 2.33 मिलियन) की बचत की जा सकती है।

रेमी फसल

रेमी गोंदरहति रेशा

रेमी : रेमी जिसे सामान्यत: चाइना घास या चाइना लिनेन के नाम से जाना जाता है, बहुवर्षीय प्रकृति का होता है। पौधों के तने (छाल) से रेशा की प्राप्ति होती है। प्राकृतिक रेशों में इसके मजबूती, चमक व नमी सोखने के गुणों के कारण कपास, रेशम के साथ मिश्रित कर वस्त्र, पर्दा, कैनवास, तौलिया आदि बनाया जाता है। देश के पूर्वोत्तर राज्यों की जलवायु इसके खेती के लिए काफी अनुकूल है। वर्षा-सिंचित अवस्था में चार कटाई (50, 45, 45 एवं 50 दिनों के अंतराल पर) जबकि सिंचित अवस्था में पाँच कटाई संभव है। प्राकृतिक रूप से गोंद लगे रेशा का निष्कर्षण डिकोर्टिकेटर यंत्र द्वारा किया जाता है जिसे रासायनिक या माइक्रोबियल विधि से दूर कर मूल्य वर्धन किया जाता है। बुवाई के दूसरे वर्ष से चौथे वर्ष तक करीब 25,000-35,000 रुपया प्रति हेक्टेयर की आय संभव है। जबकि पांचवे वर्ष में यह करीब 15,000-17,000 रुपया प्रति हेक्टेयर हो जाती है। इसी समय राइजोम (प्रवर्धन सामग्री) की बिक्री से करीब 3,00,000 रुपया प्रति हेक्टेयर की आय संभव है। रेमी के पत्तों में प्रोटीन (24 प्रतिशत) की अधिकता से पशु एवं पॉल्ट्री चारा उत्पादन की भी अच्छी संभावना है। सेल्युलोज की अधिकता के कारण उच्च गुणवत्ता वाला करेंसी नोट तथा हस्त निर्मित कागज उत्पादन की काफी संभावना है। इन सभी विशेषताओं के बावजूद रेमी का व्यवसायिक उत्पादन शैशवास्था में है। इसकी औद्योगिक माँग की आपूर्ति समय- समय पर विदेश से आयात कर पूरी की जाती है। कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ने असम तथा मेघालय राज्यों में स्थानीय कुटीर उद्योग के रुझानों को देखते हुये जन-जातीय योजना के अंतर्गत क्षेत्रफल विस्तार हेतु अनेक गतिविधियों की शुरुआत की है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि पटसन कि तुलना में समवर्गीय रेशा की स्थिति विभिन्न सामाजिक, आर्थिक एवं नीतिगत सुविधा के अभाव में संतोषजनक नहीं है। दीर्घकालीन कार्यक्रमों की मदद से कृषकों में जागरूकता तथा धरातल पर विपणन सुविधा का प्रसार एवं तकनीक उपलब्धता से बेहतर भविष्य की कल्पना की जा सकती है।

पटसन मिल

पटसन के विविध मूल्यवर्धित उत्पादों का अवलोकन

भारत सरकार के कुछ हालिया उपायों जैसे अनिवार्य पैकेजिंग अधिनियम, 'एकल उपयोग प्लास्टिक' पर प्रतिबंध लगाने की नीति, पटसन तकनीकी मिशन का शुभारंभ और भारत सरकार का बेहतरीन कार्यक्रम और पहल "स्वच्छ भारत कार्यक्रम" में इस जैवविघटनशील रेशा के उत्पादों के अधिक से अधिक उपयोग के प्रति उपभोक्ता जागरूकता, रेशा आधारित उत्पादों के लिए बाजार की मांग को बनाए रखेगा या यूं कहें इसमें अप्रत्याशित वृद्धि होने की संभावना है।

भारत में पटसन की खेती की व्यवहार्यता और स्थिरता

सितांशु सरकार, धनंजय बर्मन और अशेष कुमार घोरई
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

कपास के बाद पटसन भारत की दूसरी सबसे महत्वपूर्ण वाणिज्यिक रेशा फसल है और पूर्वी भारतीय राज्यों जैसे (पश्चिम बंगाल, बिहार और असम) की प्रमुख फसल है। यह सर्वविदित है कि लगभग 45-48 लाख छोटे और सीमांत कृषक परिवार कच्चे पटसन (पटसन और मेस्ता) की खेती में शामिल हैं। भारत में लगभग आठ लाख हेक्टेयर जमीन में कच्चे पटसन की खेती होती है, जो लगभग 110 लाख गांठ (1 बेल = 180 किलोग्राम) कच्चे पटसन रेशा उत्पादन करते हैं। पटसन उत्पादन का इन पूर्वी भारतीय राज्यों पर प्राकृतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रभाव है। देश के लगभग 75.4% पटसन क्षेत्र में हिस्सेदारी के साथ पश्चिम बंगाल की उत्पादकता सर्वाधिक (28 क्विं. प्रति है) है। यह ध्यान देने योग्य है कि पूर्व-खरीफ मौसम में पटसन को ऐसी स्थिति में बोया जाता है जब कोई अन्य बेहतर लाभदायक फसल नहीं ली जा सकती, यह भारत में सक्रिय 60 पटसन मिलों की कच्चे माल की जरूरत को पूरा करता है। वर्तमान समय में पश्चिम बंगाल और बिहार में पूर्व खरीफ सीज़न में तिल और ग्रीष्मकालीन मक्का की खेती बढ़ रही हैं। पटसन अपनी जैव-अपघटन प्रकृति के संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन से संबंधित कई अन्य गुणों के कारण अंतर्राष्ट्रीय बाजार में लगातार महत्व प्राप्त कर रहा है। यह सच है कि पटसन के बाद में उगाई गई फसलों की पैदावार और ऊर्जा उत्पादन पर पटसन के सकारात्मक अवशिष्ट प्रभाव के साथ-साथ मृदा कार्बनिक पदार्थ, उपलब्ध फॉस्फेट आदि जैसे मृदा गुणों में भी सुधार होता है। पटसन की खेती के पूर्वी भारतीय राज्यों के ग्रामीण परिवेश के साथ कई सामाजिक संबंध हैं। इन राज्यों में पटसन की खेती मुख्य रूप से छोटे और सीमांत किसानों द्वारा की जाती है और वे परिवार के सदस्यों को इसमें व्यस्त रखते हैं जो अन्यथा वस्तुतः उस समय के दौरान निष्क्रिय रहते हैं। कच्चा पटसन रेशा का विपणन का समय (सितंबर-अक्टूबर) हिंदुओं (दुर्गापूजा / दशहरा) और मुसलमानों (ईद-उज-जुहा) दोनों समुदायों के मुख्य त्यौहारों के साथ मेल खाता है जब दोनों ग्रामीण समुदायों को अपने त्यौहार, और मनोरंजन के लिए धन की आवश्यकता होती है।

कोमल पटसन पत्ती विशेष रूप से अप्रैल-मई के दौरान आम ग्रामीण लोगों के लिए पत्तीदार शाक सब्जी हैं। पटसन के पत्ते बहुत पौष्टिक होते हैं क्योंकि पटसन के पत्ते पोषक तत्वों (प्रोटीन 3.79%, लोहा 67.9 मिलीग्राम/किलोग्राम, कैरोटीन 51 मिलीग्राम/किलोग्राम और पोटेशियम 4.4 ग्राम/किग्रा) से समृद्ध हैं। पटसन के सूखे डंठल (काठी) ग्रामीण घर की दीवारों के रूप में, गोशाला, बाड़ लगाने, सब्जी लताओं में सहायता, ईंधन एवं विभिन्न धार्मिक उपयोगों के लिए प्रयोग की जाती है।

भारत में पटसन की कुल भूमि और उत्पादन

पिछले दशक के दौरान भारत में पटसन का क्षेत्रफल 7.5 से 8.0 लाख हेक्टेयर के बीच रहा। इसी तरह, देश में कुल पटसन उत्पादन भी 96.34 और 115.38 लाख गांठ के बीच था। यह देखा गया कि पिछले एक दशक के दौरान भारत में कच्चे पटसन का क्षेत्रफल धीरे-धीरे घट रहा है और पिछले पाँच वर्षों के दौरान क्षेत्र में लगभग 9.6% (यानी लगभग 77 हजार हेक्टेयर) गिरावट है। क्षेत्र में कमी के कारण कुल कच्चे पटसन उत्पादन में भी कमी आई लेकिन इस अवधि में उत्पादकता में वृद्धि के कारण उत्पादन में गिरावट कम है। भारत में मुख्य पटसन उत्पादक राज्य पश्चिम बंगाल (5.43 लाख हेक्टेयर), बिहार (0.94 लाख हेक्टेयर) और असम (0.71 लाख हेक्टेयर) हैं।

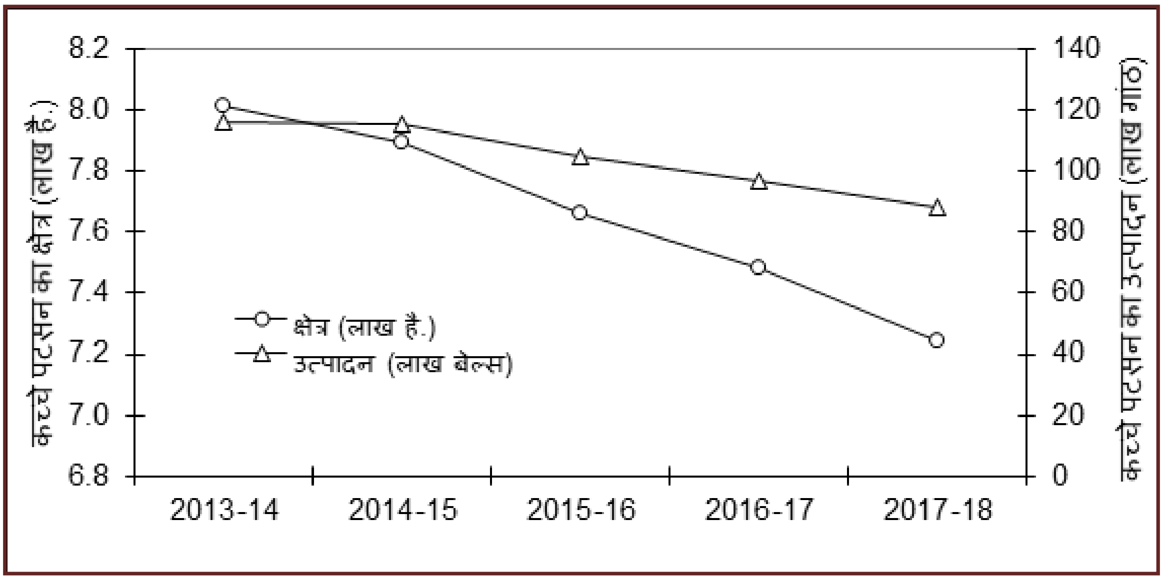

पिछले पांच वर्षों के दौरान कच्चे पटसन का क्षेत्रफल और उत्पादन

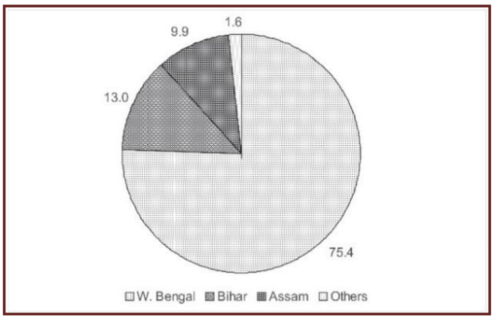

प्रतिशत पटसन क्षेत्र का राज्यों द्वारा हिस्सा

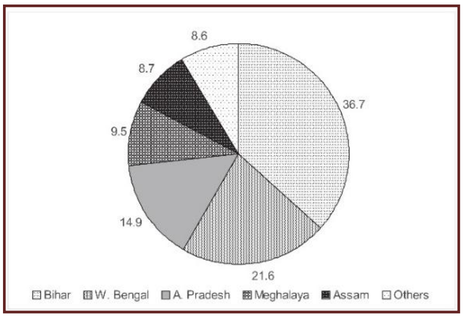

प्रतिशत मेस्ता क्षेत्र का राज्यों द्वारा हिस्सा

मेस्ता के मामले में मुख्य उत्पादक राज्य बिहार, पश्चिम बंगाल, मेघालय, असम और आंध्र प्रदेश हैं। पटसन उत्पादक राज्यों में से, पश्चिम बंगाल में सबसे अधिक उत्पादन हिस्सेदारी (79.11%) है इसके बाद बिहार (11.39%) और असम (7.84%) का स्थान आता है।

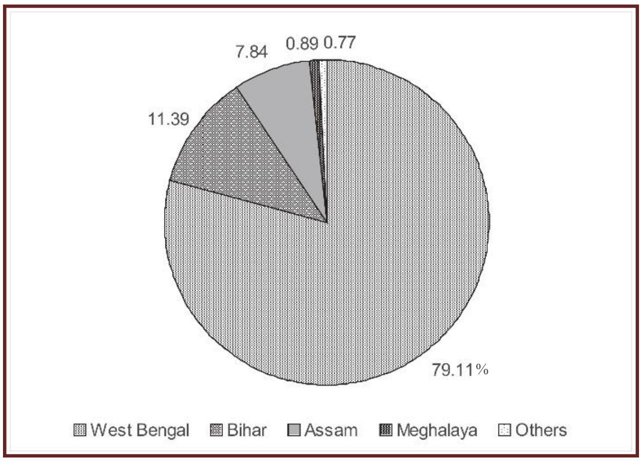

राज्यों द्वारा कच्चे पटसन उत्पादन में प्रतिशत हिस्सेदारी

अत्यधिक प्रदूषण के वर्तमान संदर्भ में कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर बढ़ रहा है और ऑक्सीजन का स्तर कम हो रहा है – इसीलिए पटसन की खेती बहुत प्रासंगिक है। एक हेक्टेयर पटसन की फसल 4 महीने की जीवन अवधि के भीतर 15 टन कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर सकती है और साथ ही पर्यावरण को 11 टन ऑक्सीजन लौटाती है। पटसन के रिट्टीटिंग पानी, पौधों के प्राथमिक पोषक तत्वों (नाइट्रोजन - 12.3 पीपीएम, फॉस्फेट - 2.07 पीपीएम, और पोटैशियम - 60.6 पीपीएम), माध्यमिक पोषक तत्वों (62.64 पीपीएम कैल्शियम और मैग्नीशियम) और सूक्ष्म पोषक (0.15 पीपीएम जस्ता) तत्वों से युक्त होते हैं जो पटसन के बाद उगाई गई चावल की फसल की सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सकता है । पटसन के रेशे के निष्कर्षण के बाद उत्पादित पटसन के सूखे डंठल अच्छी कैलोरी (3250 किलो कैलॉरी / किलोग्राम) वाली होती हैं जो आम ग्रामीणों के लिए ईंधन लकड़ी के रूप में उपयोग किया जाता है इस प्रकार ईंधन लकड़ी के लिए पेड़ों की बचत होती है। इसके अलावा पटसन के सूखे डंठल व्यावसायिक महत्व के लकड़ी के कोयला का एक मूल्यवान कच्चा माल है। औसतन 15 टन / हेक्टेयर हरी पटसन की पत्तियां मिट्टी में मिल जाती है जिससे जैविक कार्बन और मिट्टी की उर्वरता की स्थिति में काफी हद तक सुधार होता है। इससे पटसन के बाद उगाई जाने वाली फसलों के लिए खाद और रासायनिक उर्वरकों के बाहरी प्रयोग पर निर्भरता कम हो जाती है जिससे कृषि जनित प्रदूषण कम हो जाता है।

पटसन क्षेत्र बनाम अन्य प्रतियोगी फसलों का क्षेत्र

विभिन्न अन्य कारणों के अलावा पश्चिम बंगाल और बिहार में हाल के वर्षों में पटसन को ग्रीष्मकालीन मक्का और तिल जैसी पूर्व खरीफ फसलों से प्रतिस्पर्धा का सामना करना पड़ रहा है।

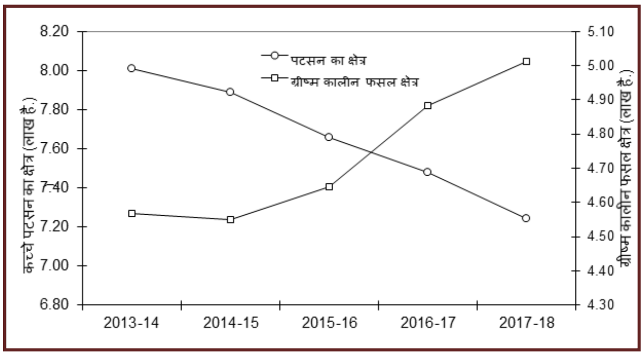

पटसन क्षेत्र बनाम ग्रीष्मकालीन फसलों (तिल और ग्रीष्मकालीन मक्का) का क्षेत्र

बिहार और पश्चिम बंगाल में पिछले कुछ वर्षों के दौरान ग्रीष्मकालीन मक्का का क्षेत्रफल बढ़ रहा है। वर्तमान में बिहार में ग्रीष्मकालीन मक्का का क्षेत्रफल 1.86 लाख हेक्टेयर है। पश्चिम बंगाल में भी पिछले 5 वर्षों के भीतर ग्रीष्मकालीन मक्का क्षेत्रफल में 34% की वृद्धि हुई। पश्चिम बंगाल में तिल लगभग 2.44 लाख हेक्टेयर में गर्मियों के मौसम में उगाया जाता है जो जमीन के लिए पटसन के साथ प्रतिस्पर्धा करता है। यह देखा गया है कि 5 वर्षों के थोड़े समय के भीतर तिल का क्षेत्रफल 32.6 हजार हेक्टेयर बढ़ गया। यह स्पष्ट है कि पटसन क्षेत्र में गिरावट का एक कारण अन्य प्रतियोगी फसलों (ग्रीष्मकालीन मक्का और तिल) की वृद्धि है। किसानों को अन्य प्रतिस्पर्द्धी फसलों के विकल्प के रूप में पटसन की खेती से आश्वस्त और अधिक लाभदायक बनाने की आवश्यकता है।

देश में पटसन उत्पादों का उत्पादन और माँग

देश में विशेष रूप से पूर्वी राज्यों (पश्चिम बंगाल, बिहार, असम और मेघालय) में अनुकूल प्राकृतिक जलवायु स्थिति के कारण कच्चे पटसन की खेती की जाती है। आजादी के बाद से पटसन का उत्पादन दोगुना हो गया है

हालांकि, पटसन उत्पादों के उपयोग में कृत्रिम रेशा से कड़ी चुनौती है। यहाँ तक कि वर्तमान समय में, भारत में पटसन मूल के मुख्य उत्पाद हेसियन बैग हैं। यह काफी संतोषजनक है कि भारत में निर्मित पटसन-आधारित उत्पादों की बड़ी मात्रा में घरेलू खपत (1091 हजार टन) होती है। भारत हेसियन कपड़े, हेसियन बैग, बोरी बैग, धागा, शॉपिंग बैग और फर्श कवरिंग इन सभी को ज्यादा मात्रा में निर्यात करता है। दुनिया को पर्यावरण बचाने के लिए पटसन की आवश्यकता का एहसास हो चुका है। इसलिए वैश्विक स्तर पर पटसन की मांग बढ़ रही है और यह भविष्य में जारी रहेगी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि देश में पटसन का भविष्य उज्ज्वल है।

भा.कृ.अनु.प. – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान द्वारा पहल

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् का एक प्रमुख पटसन और संबद्ध रेशा कृषि अनुसंधान संस्थान (भा.कृ.अनु.प.-के.प.स.रे.अनु.सं.) होने के नाते पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान के लिए संस्थान ने पटसन उत्पादन तकनीकों में सुधार के लिए अत्यधिक कार्य किया है। देश में अब खेती की जाने वाली लगभग सभी पटसन और संबद्ध रेशा किस्मों का विकास इस संस्थान द्वारा किया जाता है। पटसन बीज श्रृंखला का आरंभिक बिंदु यह संस्थान है जो सभी पटसन किस्मों और प्रजनक बीज का उत्पादन करता है। इसके अलावा संस्थान ने देश के पटसन कृषक समुदायों के लिए सभी सिद्ध तकनीकों के समय पर प्रसार के लिए संगठित प्रयासों और छोटे सीमांत किसानों के लिए विशेष ध्यान दिया। वैज्ञानिकों और तकनीकी कर्मचारियों की बहु-विषयक टीम नियमित रूप से पश्चिम बंगाल के प्रमुख पटसन खेती करने वाले जिलों में स्थित विस्तार केन्द्रों का समय समय पर दौरा करती है। बेहतर पटसन उत्पादन तकनीकों के प्रसार के लिए पटसन किसानों के साथ सम्पर्क में रहती है। सीमित भौतिक और जन संसाधनों के बावजूद, संस्थान पश्चिम बंगाल के पटसन की खेती करने वाले जिलों में अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन (एफएलडी) के माध्यम से उन्नत पटसन उत्पादन तकनीकों का प्रदर्शन करता रहा है। इस विधि से किसानों को 4.45 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अतिरिक्त उपज मिली है। हर 5 साल में संस्थान के सभी विस्तार केन्द्र अन्य क्षेत्र के किसानों के बीच बेहतर पटसन उत्पादन तकनीकों को प्रसारित करने के उद्देश्य से एक नई जगह का चयन करते है। यह भी उल्लेखनीय है कि उत्तर बंगाल के जिलों के लिए, उत्तर बंगा कृषि विश्वविद्यालय, पुंडी बारी, उत्तर दिनाजपुर में स्थित अखिल भारतीय नेटवर्क परियोजना – प्राकृतिक रेशा का एक केन्द्र उस क्षेत्र के पटसन किसानों की आवश्यकता को पूरा करती है।

जूट- आई केयर कार्यक्रम

बेहतर रेशा गुणवत्ता के साथ उत्पादकता बढ़ाने के उद्देश्य से, राष्ट्रीय पटसन बोर्ड (एनजेबी), भारतीय पटसन निगम (जेसीआई) और भा.कृ. अनु.प.- केंद्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान के सहयोग से 2015-16 (चरण-1) के दौरान जूट- आई केयर कार्यक्रम को लागू किया गया है। इस कार्यक्रम में मुख्य चार तकनीकों का प्रसार किया गया; ये हैं - उन्नत बीज (जे. आर. ओ 204 या सुरेन), जूट सीड ड्रिल द्वारा पंक्ति में बोना, मैकेनिकल वीडर (क्रिजैफ नेल वीडर और सिंगल व्हील जूट वीडर) और 'क्रिजैफ सोना' द्वारा उन्नत सड़न की प्रक्रिया। कार्यक्रम के 5 वें चरण (2019-20) में भारत के 6 राज्यों के 72 पटसन उत्पादक ब्लॉकों के 2.5 लाख से अधिक किसानों को शामिल किया गया है। इस चरण में उन्नत उत्पादन तकनीक के माध्यम से लगभग 1.1 लाख हेक्टेयर में पटसन उत्पादन हुआ जिससे रेशा की पैदावार में 15-25% की वृद्धि हुई और साथ में न्यूनतम एक ग्रेड (बेहतर गुणवत्ता) वाला रेशा प्राप्त हुआ और किसानों की आय भी बढ़ी। भविष्य में भी यह कार्यक्रम बड़े क्षेत्र में किये जाने की संभावना है।

राज्य कृषि विभाग की भूमिका

पटसन पश्चिम बंगाल, बिहार और असम की महत्वपूर्ण व्यावसायिक फसलें हैं और छोटे सीमांत किसानों द्वारा पसंद की जाती हैं। कृषि विभाग के माध्यम से पश्चिम बंगाल, बिहार और असम राज्यों की राज्य सरकारों ने इस क्षेत्र के विकास पर ध्यान दिया है। कृषि के सहायक निदेशक (ए.डी.ए.) या समकक्ष अधिकारी राज्यों के प्रत्येक पटसन उत्पादकों का ब्लॉकों में पटसन उत्पादन की नवीनतम तकनीक और सूचना देने के लिए नियुक्त हैं। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन-वाणिज्यिक फसलों (एनएफएसएम –सी सी) के कार्यान्वयन के साथ, राज्यों के पटसन विकास कार्यक्रमों को नई गति मिली है। एन.एफ.एस.एम (सी.सी) कोष का प्रमुख हिस्सा अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन (एफ.एल.डी) के माध्यम से किसानों की भागीदारी बढ़ाने के लिए कार्य कर रहा है। एन.एफ.एस.एम (सी.सी) (जूट) के अन्य महत्वपूर्ण गतिविधियाँ हैं -प्रमाणित बीज का उत्पादन, बीज ग्राम कार्यक्रम एवं राज्य स्तरीय प्रशिक्षण।

उच्च उत्पादकता और बेहतर रेशा गुणवत्ता वाला पटसन के लिए सुझाव

वास्तव में जूट- आई केयर पटसन उत्पादन को वढ़ावा देने हेतु एक बहुत ही सराहनीय कार्यक्रम है। जूट- आईकेयर कार्यक्रम में सभी अच्छे परिणामों के बावजूद, कार्यक्रम से प्राप्त परिणाम (15-20% उपज वृद्धि) में और सुधार की आवश्यकता है। तुलनात्मक रूप से कम उपज का प्रमुख कारण यह हो सकता है कि कुल पटसन किसानों का केवल एक छोटा भाग शामिल रहा है। 2.5 लाख किसानों में से, केवल 30% किसानों को प्रशिक्षित किया गया था। कुल तकनीकी पैकेज में से केवल चार पटसन उत्पादन तकनीकों पर ध्यान केन्द्रित किया गया पटसन उत्पादन प्रणाली में असंतुलित उर्वरक उपयोग, सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी, मिट्टी की अम्लता, त्रुटिपूर्ण कीट और रोग प्रबंधन इन सभी पर ध्यान देकर लाभ को और बढ़ा सकते है। हालांकि इस कार्यक्रम में संबद्ध संगठनों में से एक प्रमुख- भारतीय पटसन निगम, की उपस्थिति पटसन प्रमुख उत्पादक क्षेत्रों में नगण्य या अपर्याप्त है। इसके अलावा पीएसीएस (प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों) की भागीदारी वांछित स्तर तक नहीं थी। इस तरह के बड़े कार्यक्रमों के प्रबंधन के लिए उनकी अंतर्निहित कमजोरी के कारण या अपने नियमित कर्तव्यों से कम समय देने के कारण यह कार्यक्रम बहुत सफल नहीं था। राज्य कृषि विभाग के पास विशेषज्ञ और प्रशिक्षित कर्मियों के साथ सभी ब्लॉकों में व्यापक विस्तार नेटवर्क है। वे पटसन उत्पादन प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए इस तरह के महत्वाकांक्षी कार्यक्रमों में योगदान कर सकते है। जूट- आई केयर कार्यक्रम से बेहतर परिणामों के लिए किसी भी संभावित

तंत्र के माध्यम से उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। इन सभी कमियों और कमजोरियों को ध्यान मे रखते हुए कार्यक्रम के लक्षित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जूट- आई केयर के बाद के चरणों को लागू करते समय फिर से ध्यान देने की आवश्यकता है।

यह सर्वविदित है कि पटसन बीज क्षेत्र मुख्य रूप से निजी एजेंसियों (70%) द्वारा नियंत्रित किया जाता है और सरकारी क्षेत्र में पटसन बीज का नियंत्रण केवल 30% है। वस्तुतः खुले बाजार में उपलब्ध पटसन बीज की गुणवत्ता पर राज्य का कोई प्रत्यक्ष नियंत्रण नहीं है। गैर-प्रमाणित, खराब गुणवत्ता और नकली बीज, उच्च उपज प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। निजी पटसन बीज एजेंसियों उच्च उपज वाले पटसन की किस्मों को बीज श्रृंखला में शामिल करने के लिए हैं जो वास्तव में देश में पटसन रेशा उत्पादन को प्रभावित करता है। इसलिए सरकार नियंत्रित राष्ट्रीय बीज निगम (एनएससी) और राज्य बीज निगम (एसएससी) के पास पटसन बीज श्रृंखला संचालन में अधिक भागीदारी होना चाहिए। दो किलो आकार के बीज पैकेट के बजाय जो छोटे पटसन के किसानों की आवश्यकता से बड़ा है, एक किलो बीज पैकेट की सिफारिश की जाती है । न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) संचालन में जेसीआई की सामान्य जिम्मेदारी /भूमिका बढ़ाने की आवश्यकता है। यह संगठन पटसन की खेती का मौसम के दौरान सार्वजनिक वितरण प्रणाली के माध्यम से गुणवत्ता परक पटसन बीज वितरण / बिक्री केन्द्र, तकनीक प्रसार प्रक्रिया में शामिल हो सकता है।

राज्य के कृषि विभाग अपने ब्लॉक स्तर के अधिकारियों के माध्यम से संबंधित ब्लॉकों में केंद्रीय एजेंसियों द्वारा कार्यान्वित पटसन की नवीनतम तकनीक प्रसार में सहायता करता है लेकिन वे प्रयास कई वैध कारणों के कारण सीमित मामलों में हैं। राज्य के अधिकांश कृषि विकास कार्यक्रम लागू करने में पटसन को तुलनात्मक रूप से कम महत्व मिला। इसलिए यह सुझाव दिया जाता है कि राज्य के कृषि विभाग राज्य के सभी पटसन उगाने वाले ब्लॉकों में अधिक पटसन कृषि संबंधी कार्यक्रमों को तैयार और कार्यान्वित करें। हालांकि, पटसन विकास कार्यक्रम तैयार करते समय क्षेत्रीय बाधाओं / सीमाओं पर विचार करने की आवश्यकता होती है। अन्यथा पूरे राज्य के लिए कार्यक्रम एक समान एक तय लक्ष्य प्राप्त करने में असफल हो सकता है।। इसके अलावा पटसन को पूर्वी भारत और विशेष रूप से पश्चिम बंगाल के बी.जी.आर.ई.आई. (पूर्वी भारत में हरित क्रांति लाना) कार्यक्रम में शामिल करने की आवश्यकता है ।

पटसन की खेती को बढ़ावा देने के लिए भविष्य की रूप रेखा :

भारत में पटसन की खेती को बढ़ावा देने के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए।

(i) बेहतर वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक, सूचना तकनीक और विस्तार तंत्र के द्वारा आधुनिक उपकरणों का अधिक से अधिक उपयोग ।

(ii) खेती और रेशा निष्कर्षण के सभी चरणों में यंत्रीकरण (विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए उपयुक्त) का अधिक से अधिक प्रयोग।

(iii) बेहतर रेशा गुणवत्ता के लिए बेहतर सड़न तंत्र की निरंतर खोज करना।

(iv) पटसन रेशा उत्पादन के लिए उपयुक्त जल प्रबंधन तकनीक, जिससे कम पानी की आवश्यकता होती है।

(v) स्थानीय, क्षेत्रीय और राष्ट्रीय स्तर पर कुशल और अनुकूल विपणन तंत्र का संचालन।

(vi) संबंधित उद्योग द्वारा रेशा और मध्यवर्ती उत्पादों में मूल्यवर्धन। घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बड़े हिस्सेदारी पाने में सक्षम गुणवत्ता वाले उत्पादों का उत्पादन करने के लिए जूट मिलों का आधुनिकीकरण ।

(vii) औपचारिक स्रोत से पटसन क्षेत्र में उच्च ऋण प्रवाह और फसल बीमा पर ज़ोर देना ।

(viii) केन्द्र और राज्य सरकारों द्वारा पटसन क्षेत्र में सभी प्रकार की नीति का समर्थन करना ।

(ix) अवांछित कृत्रिम रेशा प्रतिस्थापन द्वारा पटसन उत्पादों के अधिक उपयोग के लिए जनता के बीच जागरूकता पैदा करना। यदि आवश्यक हो तो प्लास्टिक के कुछ वर्ग के उपयोग के खिलाफ कानून बनाना और जहां संभव हो पटसन का अनिवार्य उपयोग करना।

(x) सरकार द्वारा पटसन उत्पादों का निर्यात संवर्धन और आयात प्रतिबंधित करना।

पटसन कृषि अनुसंधान संस्थानों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों में पटसन के लिए प्रौद्योगिकी उत्पत्ति और परिशोधन की अधिक भूमिका है। शोधकर्ता की व्यक्तिगत आकांक्षा को पूरा करने वाले शुद्ध अनुसंधान के लिए ही नहीं, पटसन कृषि अनुसंधान की महत्वपूर्ण मात्रा को तकनीक निर्माण के लिए ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है जो पटसन कृषक समुदाय द्वारा सीधे और तुरंत उपयोग योग्य होगा। पटसन पर इस तरह के कृषि अनुसंधान सभी संभावित पारंपरिक और जैव प्रौद्योगिकी उपकरणों का उपयोग करके विशेष किस्म (विशेषकर अजैविक और जैविक दबाव प्रतिरोध) विकसित करने की आवश्यकता है। इसमें बदलते जलवायु स्थिति में बेहतर फसल वृद्धि (और उपज) को बनाए रखने के लिए उत्पादन और संरक्षण प्रौद्योगिकी, विशेष रूप से खंडित भूमि जोतों के लिए पटसन कृषि और रेशा निष्कर्षण में दक्षता, अर्थव्यवस्था और शारीरिक श्रम में कमी के लिए यंत्रीकरण शामिल हैं। ।

कृषि की आय बढ़ाने और मृदा संरक्षण में सीसल मिश्रित खेती की भूमिका

मधुसूदन बेहेरा एवं अजित कुमार झा
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

सीसल एकमात्र ऐसा पत्तियों से रेशा देने वाली फसल है जो अर्ध शुष्क जलवायु को सहन कर सकता है तथा इसकी खेती उन भागों में भी की जा सकती है जो कि बंजर है अथवा वहाँ और कोई अन्य खेती नहीं की जाती हो। यह एसपरगेशी वंश का फसल है जिसका जिनस एगेव तथा विभिन प्रजातियाँ जैसे सीसलाना, कंटाला, भेराक्रुज, अमेरिकाना, अंगस्तीफोलिया इत्यादि हैं। एक संकर किस्म (बामरा हाइब्रिड-1) का विकास सीसल अनुसंधान केन्द्र, बामरा द्वारा किया गया है जो अन्य किस्मों की अपेक्षा 30 प्रतिशत अधिक रेशा देती है।

कृषि की आय बढ़ाने हेतु सीसल की खेती के साथ- साथ फल- सब्जी उत्पादन, फसल उत्पादन, मवेशी पालन, मछली पालन इत्यादि मिश्रित खेती के रूप में किये जाने की काफी संभावनाएं है। मिश्रित खेती से कम खर्च पर एक अवयव के उत्पाद या अवशेष को दूसरे अवयव के निवेश के रूप में उपयोग करने का अवसर मिलता है एवं उत्पादन लागत में कमी कर शुद्ध लाभ में वृद्धि की जा सकती है। मिश्रित खेती अधिक समय तक मृदा की उत्पादकता बनाये रखते हुए फसल उत्पादन में टिकाऊपन लाने में सहायक है। मिश्रित खेती जल बहाव में अवरोधक बनकर भूमि व जल संरक्षण को बढ़ावा देती है। हमारे देश में कृषिगत क्षेत्र का लगभग 65 प्रतिशत भाग वर्षा पर आधारित है। प्राकृतिक आपदा जैसे अनावृष्टि के कारण सूखा या अतिवृष्टि के कारण बाढ़ के फलस्वरूप अधिकतर फसलें नष्ट हो जाती है। इस प्रकार की परिस्थितियों में आर्थिक दृष्टिकोण से मिश्रित खेती सुरक्षा कवच का काम करती है। यदि कोई फसल मौसम की असामान्यता के कारण नष्ट हो जाती है तब भी दूसरी फसल बची रहती है तथा खेती से नुकसान कम हो जाता है। कीट एवं व्याधियों के प्रकोप की स्थिति में भी मिश्रित खेती के द्वारा सुरक्षा प्राप्त होती है।

सन 1825 में सीसल की खेती भारत में सर्वप्रथम पुर्तगीजों द्वारा शुरू की गयी थी। विश्व में सीसल रेशा का कुल उत्पादन 220.2 हज़ार टन है। सीसल रेशे के सर्वाधिक उत्पादक देश (प्रति वर्ष) है - ब्राज़ील (89.1 हज़ार टन), केन्या (27.9 हज़ार टन), तंज़ानिया (25.7 हज़ार टन), मैक्सिको (20.1 हज़ार टन), मेडागास्कर (18.9 हज़ार टन), चीन (16.0 हज़ार टन) एवं वेनज़ुएला (6.5 हज़ार टन) इत्यादि। भारत में एक अनुमान के अनुसार सीसल रेशे का प्रति वर्ष कुल उत्पादन लगभग 12.0 हज़ार टन है जबकि 50.0 हज़ार टन रेशे की आवश्यकता है। आयात डाटा (2007) के अनुसार भारत द्वारा वर्ष 2007 में लगभग 1951 टन सीसल रेशे (मूल्य लगभग 2.33 मिलियन USD) का आयात किया गया था जो कि वर्ष 1995 में लगभग 284 टन था। इस प्रकार देखा जाए तो इन 12 वर्षों में सीसल रेशे की मांग 7 गुना बढ़ी है। इस प्रकार जनसंख्या एवं औधोगिक मांग को देखा जाय तो सीसल रेशे का वर्ष 2050 तक आयात मूल्य लगभग 44 मिलियन USD तक हो सकता है।

भारत में इसकी खेती ओडिशा, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखण्ड, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना, आंध्रप्रदेश इत्यादि राज्यों में होती है। इसमें ओडिशा में सबसे अधिक सीसल की खेती की जाती है। जैसा कि सीसल की खेती सभी तरह के जलवायु एवं मिट्टी में की जा सकती है, ओडिशा सरकार के मृदा संरक्षण विभाग द्वारा लगभग 20 वर्ष पहले मृदा क्षरण वाले क्षेत्र में मृदा संरक्षण हेतु सीसल की खेती को प्रारम्भ किया गया और वर्तमान में यह लगभग 6000 एकड़ क्षेत्र तक पहुँच गया। जम्मू एवं कश्मीर में मृदा संरक्षण विभाग द्वारा भी सीसल की खेती जल विभाजन (वाटरशेड) क्षेत्र में मृदा संरक्षण के लिए की जा रही है।

सीसल के रेशों का उपयोग समुद्री जहाज के लंगर का रस्सा, बुनाई की रस्सी, चटाई, दरी, मछली पकड़ने का जाल, ब्रश, झाड़ू, लेडीज बैग, बेल्ट, फ्लोर कवर एवं वाल कवर इत्यादि सामग्री बनाने में होता है। इसके अलावा सीसल रेशे का इस्तेमाल कम्पोजिट सामग्री को मजबूती प्रदान करने के लिए भी किया जा सकता है। सीसल रेशा प्राकृतिक रूप से विघटित हो जाता है अतः ग्लास फ़ाइबर की तुलना में पर्यावरण के लिए बेहतर है। सीसल रेशा निकलने के बाद बचे हुए भाग में हेकोजेनीन पाया जाता है जिसका उपयोग कोर्टिकोस्टेरोइड हार्मोन बनाने में किया जाता है।

भारत में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 328.73 मिलियन हेक्टेयर में से लगभग 147.0 मिलीयन हेक्टेयर मृदा अपरदन से प्रभावित है जिसमें 69.0 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्रफल अपरदन की गंभीर स्थिति की श्रेणी में रखा गया है। सीसल की खेती मृदा अपरदन कम करने में काफी सहायक सिद्ध हो सकती है। सीसल पौधा, जड़ फैलने वाला तथा रेशेदार होने के कारण मिट्टी के कणों को आपस में बांधे रखता है। इस प्रकार जल एवं वायु से होने वाले मृदा अपरदन को कम करता है। सीसल के पौधों को हमेशा ढलान के विपरीत दो कतार विधि में लगाया जाना चाहिए ताकि जल बहाव की गति कम हो तथा मृदा संरक्षण में सहायक हो सके। इस प्रकार सीसल की खेती वाटरशेड प्रबंधन में काफी उपयोगी है। सीसल की खेती आर्थिक दृष्टिकोण के साथ–साथ वातावरण के लिए भी काफी उपयोगी है। रेगिस्तान वाले क्षेत्र में भी रेत के टीलों इत्यादि को नियंत्रित रखने में सीसल सहायक हो सकता है। सीसल की खेती 34.6% बहाव को कम करने, 61.9% मृदा क्षरण रोकने एवं मिट्टी में 16.4% अधिक नमी संरक्षित रखने में मदद करती है।

सीसल में अन्तः फसल के रूप में दलहनी फसलें जैसे मूंग, उड़द, बोदी, अरहर, कुलथी इत्यादि की खेती अत्यधिक लाभकारी हो सकती है तथा इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति भी बनी रहती है। दलहनी फसलें जमीन को काफी हद तक ढ़के हुए रहती है, जिससे जल बहाव की गति कम होती है तथा मिट्टी संरक्षित रहती है। तिलहनी फसलों में तिल, सरगुजा, मूँगफली इत्यादि की खेती सीसल में अन्तः फसल के रूप में की जा सकती है।

सीसल की खेती के साथ बोदी की फसल | सीसल की खेती के साथ मूंग की फसल | सीसल की खेती के साथ कुलथी की फसल

सीसल अनुसंधान केन्द्र, भा. कृ.अनु. प. – क्रिजैफ, बामरा में चल रहे अनुसंधान से पता चलता है कि सीसल की खेती में अन्तः फसल के रूप में फलदार वृक्ष जैसे अमरूद, आम, शरीफा, चीकू, आंवला, बेर, नींबू, अनार इत्यादि की खेती लाभदायक सिद्ध हो सकती है। फल वाली फसलें सीसल की तरह ही कम उपजाऊ एवं ऊबड़-खाबड़ जमीन में आसानी से उगायी जा सकती है। सीसल के कतारों में अमरूद का पौधा लगाकर 2.5 वर्षों के बाद 84.0 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अमरूद प्राप्त होता है। इसी प्रकार आम का पौधा लगाकर 26.0 क्विंटल प्रति हेक्टेयर आम प्राप्त किया जा सकता है।

सीसल की खेती के साथ अमरूद का पौधा | सीसल में अन्तः फसल के रूप में आम का पौधा | सीसल में अन्तः फसल के रूप में बेर का पौधा

सीसल की खेती के साथ औषधीय, सुगंधित एवं मसालों की खेती से भी लाभ कमाया जा सकता है। मसालों में सौंफ से प्रति हेक्टेयर सीसल के खेत से 7.23 क्विंटल सौंफ प्राप्त होता है। कंद वाली फसलों में प्रति हेक्टेयर सीसल के खेत से 74.11 क्विंटल ओल प्राप्त होता है। सब्जियों में प्रति हेक्टेयर 88.26 क्विंटल भिण्डी प्राप्त किया जा सकता है। सुगंधित पौधों में खस, लेमन घास, पामारोजा एवं सिट्रोनेला से भी लाभ कमाया जा सकता है। खस के गुदगुदा एवं रेशेदार जड़ संरचना मिट्टी के कणों को 3.0 मी. गहराई तक बांधकर रखने में मदद करता है।

सीसल के साथ सौंफ की खेती | सीसल के साथ धृतकुमारी की खेती | सीसल के साथ सफेद मूसली की खेती

सीसल में अन्तः फसल के रूप में लगाये गए औषधीय, सुगंधित, मसालों एवं अन्य पारंपरिक फसलों की खेती से होने वाले उपज एवं आमदनी का ब्यौरा दिया जा रहा है जो निम्न प्रकार है (2018-19)

फसल	सीसल रेशा का उपज (क्विं./हे.)	अन्तः फसल का उपज (क्विं./हे.)	अन्तः फसल का सीसल समतुल्य उपज(क्विं./हे.)	कुल सीसल समतुल्य उपज(क्विं./हे.)	शुद्ध आमदनी (रु./ हे.)	लाभ : लागत
सौंफ (मसाला)	14.09	7.23	16.30	30.39	159903	2.92
सफेद मूसली	12.68	14.02	19.05	31.73	158992	2.67
धृतकुमारी	14.69	88.65	18.30	32.99	153968	2.40
खस	13.16	9.78	16.46	29.62	146201	2.61
ओल	11.18	74.11	14.86	26.04	105457	2.01
मिर्च(मसाला)	13.40	11.46	9.13	22.53	98153	2.19
भिण्डी	10.30	88.26	11.2	21.57	90809	2.11
लेमन घास	14.02	263	4.84	18.86	86135	2.33
असलिओ	13.43	4.15	4.89	18.33	84918	2.37
अश्वगंधा	13.54	4.26	4.57	18.11	79370	2.21
इसबगोल	10.93	4.45	4.14	15.07	70450	2.41
सिट्रोनेला	10.45	178	4.45	14.90	69960	2.42
पामारोजा	10.85	147.5	4.08	14.93	67072	2.28
बादाम	11.69	6.12	3.27	14.96	62444	2.09
कुलथी	9.94	9.07	3.04	12.98	39146	1.60

मिश्रित खेती का अर्थ फसल उत्पादन के साथ –साथ पशुपालन से भी है। इस खेती में पशुओं का योगदान एक पूरक व्यवसाय के रूप में होता है। मिश्रित खेती में फसलोत्पादन के साथ- साथ दुधारू गाय, बकरी पालन, मुर्गी पालन, बत्तख पालन, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन, केंचुआ खाद उत्पादन, मछली पालन इत्यादि की भी काफी संभावनाएँ है।

मशरूम उत्पादन

केंचुआ खाद उत्पादन

सीसल आधारित कृषि में गो–पालन

सीसल आधारित कृषि में मछली पालन

सीसल के साथ चारे फसल जैसे बरसीम, नेपियर घास, ज्वार इत्यादि की खेती भी की जा सकती है। मिश्रित खेती से प्राप्त चारे फसलों एवं अन्य उत्पाद दुधारू गाय, बकरी पालन, मुर्गी पालन, मशरूम उत्पादन, मधुमक्खी पालन इत्यादि के उपयोग में लाया जा सकता है। इस प्रकार किसानों को भी सालों भर दूध, अंडा, मशरूम, शहद आदि के बिक्री के द्वारा आय प्राप्त हो सकती है। पशुओं से प्राप्त गोबर व मूत्र से भूमि की उर्वर शक्ति में वृद्धि होती है। जैविक खाद फसल पैदावार हेतु पोषक तत्व के साथ- साथ मिट्टी की भौतिक अवस्था को भी सुधारती है। इससे मिट्टी भुरभुरी बनती है, जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है जिससे मिट्टी का क्षरण कम से कम हो पाता है। बत्तख अवशिष्ट के द्वारा मछलियों को पोषक तत्व मिल जाता है तथा बत्तखों को भी तालाब के माध्यम से भोजन (कीड़े, मकोड़े, मेढ़क इत्यादि) मिल जाता है।

इस प्रकार सीसल की मिश्रित खेती सघन कृषि के लिये अच्छा अवसर प्रदान करती है। शुद्ध आय प्रति हेक्टेयर अकेला सीसल की खेती करने की अपेक्षा सीसल मिश्रित खेती से बहुत अधिक होता है। सीसल मिश्रित खेती में भूमि, श्रम एवं पूंजी का समुचित प्रयोग हो पाता है। सालों भर किसानों को नियमित रूप से आमदनी होती रहती है खासकर उस समय जब प्रारम्भ के 2.5 वर्षों तक सीसल रेशों का उत्पादन नहीं होता है। इसके अलावा किसानों को दूध, अंडा, फल, सब्जियों, मशरूम, मधु आदि के रूप में पौष्टिक एवं संतुलित आहार मिल जाता है। सीसल मिश्रित खेती में खासकर खस, लेमन घास, पामारोजा, सिट्रोनेला एवं दलहनी फसलें इत्यादि की खेती अपनाकर जल बहाव में कमी द्वारा भूमि एवं जल संरक्षण किया जा सकता है। कटाई के पश्चात जो फसल अवशेष खेत में बचते है उन्हें खेत में पलवार के रूप में उपयोग कर मिट्टी एवं जल संरक्षण के लिये लाभदायक बनाया जा सकता है। इसी प्रकार सीसल के साथ फलदार वृक्षों की खेती कृषि आमदनी बढ़ाने के साथ-साथ मृदा अपरदन रोकने में भी बहुत सक्षम है। सीसल मिश्रित खेती से ग्रामीण एवं जनजातीय क्षेत्रों में रोजगार का अवसर पैदा होता है। एक अनुमान के अनुसार केवल सीसल की खेती कार्य से लगभग 113 मानव दिवस सृजित हो सकता है।

जेएएफ – सेफ एप्प: पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में कीट और रोग प्रबंधन के लिए एक गाइड

एस. सतपथी, बी. एस. गोटयाल, आर. के. डे एवं उत्कर्ष पाण्डेय

भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

परिचय

विश्व एवं भारत के संदर्भ में मोबाइल संचार प्रौद्योगिकी में पिछले कुछ दशकों के दौरान जबरदस्त परिवर्तन देखा गया है। इस क्षेत्र में प्रासंगकिता के साथ तकनीकी विकास के चलते कृषि सहित व्यापक क्षेत्रों में मोबाइल संचार प्रौद्योगिकी का दायरा बढ़ा है। कृषि प्रौद्योगिकी प्रसार के लिए मोबाइल एप्लिकेशन विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। यह तकनीक आधुनिक ज्ञान एवं सूचना तक पहुँच के लिए सबसे आसान तरीका प्रदान करती है।

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार है क्योंकि लगभग देश की 60% आबादी अपनी आजीविका के लिए कृषि और संबद्ध क्षेत्र पर निर्भर है। किसान की आय को दोगुना करने के लिए सरकार द्वारा किया गया प्रयास सस्ती कृषि प्रौद्योगिकी, बेहतर बाजार नेटवर्क, आपूर्ति श्रृंखला और कृषि उपज के लिए सुनिश्चित कीमतों के माध्यम से भारतीय कृषि को मजबूत करने से ही संभव हो सकता है। किसान केवल मोबाइल एप्लिकेशन-आधारित सूचना और संचार प्रौद्योगिकी (आई सी टी) के माध्यम से इन तक पहुंच सकते हैं। मोबाइल फोन के उपयोग में वृद्धि कृषि संचार प्रक्रिया को बदल रही है जिसके परिणामस्वरूप नई सेवाओं और अनुप्रयोगों का विकास हुआ है। कृषि क्षेत्र में, बाजार एवं मौसम की जानकारी, निगरानी संयंत्र, स्वास्थ्य, शिक्षा अन्य सेवाएं आदि शामिल हैं। कई अध्ययनों के नतीजों ने किसानों को नई कृषि प्रौद्योगिकी के साथ सशक्त बनाने में मोबाइल फोन के महत्वपूर्ण योगदान को दर्शाया है। सबसे सस्ते और कम समय में मौसम, बाजार आदि से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी, व्यापक अनुप्रयोग और पहुंच के साथ इस प्रौद्योगिकी की पूर्ण क्षमता का दोहन करना बहुत महत्वपूर्ण है। मोबाइल फोन की शुरूआत से किसानों और अन्य हितधारकों के लाभ के लिए कृषि में नई सेवाओं और अनुप्रयोगों का विकास हुआ है। कभी-कभी संदेशों के साथ शुरू होने वाली सेवाएं सलाहकारों के मल्टीमॉडल और मल्टीमीडिया वितरण के लिए विकसित हुई हैं जिन्होंने किसानों और विस्तार कर्मियों के बीच की दूरी को कम किया है।

कृषि और संबद्ध क्षेत्रों में मोबाइल एप्प

मोबाइल एप्प सॉफ्टवेयर का लाभ उठाने के लिए डिज़ाइन किए गए एक प्रकार के सॉफ्टवेयर हैं क्योंकि इसकी प्रमुखता जैसे कि सामर्थ्य, व्यापक स्वामित्व, आवाज संचार, त्वरित और सुविधाजनक सेवा प्रदान करना है।

नतीजतन, मोबाइल नेटवर्क के तेजी से विकास और मोबाइल हैंडसेट की गिरती कीमतों के कारण मोबाइल एप्प की संख्या में एक वैश्विक विस्फोट हुआ है। भारत के मामले में इसके अलावा दूसरी पीढ़ी (2 जी) फोन और चौथी पीढ़ी (4 जी) फोन के व्यापक उपयोग ने आबादी के एक बड़े हिस्से को मोबाइल एप्प तक की पहुंच और लोकप्रियता को बहुत आसान कर दिया है।

कृषि और संबद्ध क्षेत्र की जानकारी प्रदान करने वाले मोबाइल ऐप्स की संख्या बढ़ती जा रही है। एप्लिकेशन (एप्प) ऑनलाइन स्टोर या वायरलेस नेटवर्क से (मुफ्त में या भुगतान के लिए) डाउनलोड किया जाता है और प्रभावी ढंग से कार्य करने के लिए नेटवर्क के लाइव कनेक्शन की आवश्यकता हो सकती है। किसानों के लिए मोबाइल एप्प के मुख्य लाभ किसी भी नयी जानकारी तक पहुंचना है। मोबाइल हैंडसेट में जानकारी को आसानी से किसानों तक पहुँचाने के लिए संग्रहित किया जाता है उदाहरण के लिए प्रथाओं के पैकेज, कीट और बीमारी की जानकारी और योजना से संबंधित जानकारी आदि। जहाँ भी जानकारी प्रकृति में गतिशील है, उदाहरण के लिए मौसम का विवरण, बाजार मूल्य, सलाहकार सेवाओं, बैक-एंड सर्वर डेटाबेस से डेटा प्राप्त करना, इन सभी के लिए मोबाइल एप्लिकेशन को इंटरनेट संयोग की आवश्यकता होती है। किसानों को उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं और प्रश्नों के जवाब में समय पर जानकारी की आवश्यकता होती है। भारत सरकार ने किसानों और अन्य हितधारकों के लाभ के लिए, कृषि से संबंधित गतिविधियों के बारे में जानकारी के प्रसार के लिए कई वेब और मोबाइल-आधारित एप्लिकेशन लॉन्च किए हैं। इन एप्स को आधिकारिक वेबसाइट mkisan.gov.in या गूगल प्ले स्टोर से डाउनलोड किया जा सकता है। कृषि संस्थानों, निजी क्षेत्रों, गैर सरकारी संगठनों द्वारा भी एप्प विकसित किए गए हैं। ये एप्प कृषि अनुसंधान संस्थान से किसानों और अन्य हितधारकों तक जानकारी का प्रसार कर रहे हैं और हितधारकों के बीच जानकारी के आदान-प्रदान की सुविधा प्रदान कर रहे हैं।

जेएएफ – सेफ मोबाइल एप्प

जेएएफ – सेफ, एक एण्ड्रोइड आधारित मोबाइल एप्प भा. कृ.अनु. प – केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर द्वारा विकसित पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों के कीट एवं रोग नियंत्रण पर वैज्ञानिक जानकारी प्रदान करता है। इस एप्प मे कीट एवं उनके द्वारा क्षति के उपसर्गों एवं समन्वित जानकारियों के नियंत्रण को सजीव तरीकों से दर्शाया है यह किसानों को अधिक स्पष्टता, त्वरित और कीटों को नियंत्रित करने में उचित निर्णय लेने के लिए मार्गदर्शन करता है।

पिछले एक दशक के दौरान पटसन एवं समवर्गीय रेशा (जेएएफ) फसलों में कीटों और प्राकृतिक शत्रु कीटों के परिदृश्य में बदलाव आया है, जो जलवायु और खेती के बदलते घटनाक्रम से जुड़ा हुआ है। पटसन की फसल में कीट एवं रोग का प्रकोप और उनका संक्रमण, फसल अवस्था और मौसम मापदंडों से संबंधित है। पौधों में कीट रोग की पहचान इसके प्रबंधन की दिशा में पहला कदम है। नाशीजीव कीटों और प्राकृतिक शत्रु की पहचान मुख्य रूप से संक्रमण और क्षति की प्रकृति के समय पर निर्भर करती है। क्षति के प्रकार एवं उससे नुकसान करने वाले कीट की जानकारी इस एप से प्राप्त होती है जो इनके नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण है। इस मोबाइल एवं एप्प में कीट रोग के कारण होने वाली क्षति और जीवन चक्र की प्रकृति के बारे में विस्तार से वर्णन किया गया है । यह ज्ञान कीट एवं रोग प्रबंधन

गतिविधियों को शुरू करने के निर्णय लेने के लिए बहुत मददगार है। यह एप्प व्यापक रूप से किसानों को पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में कीटों की समस्याओं के बारे में जागरूक करता है एवं उनके उचित, आर्थिक प्रबंधन के तरीकों को बताता है। यह मोबाइल एप्प पटसन उत्पादकों, छात्रों, विस्तार कर्मियों, शिक्षकों और अन्य हितधारकों के लिए उपयोगी है।

जेएएफ – सेफ एप्प डाउनलोड की विधि

एक उपयोगकर्ता अपने एण्ड्रोइड मोबाइल डिवाइस मे गूगल प्ले स्टोर पर JAF - Safe लिखकर JAF - Safe डाउनलोड कर सकता है और इसे इंस्टॉल करें। एप्प की इंस्टॉलेशन प्रक्रिया जो कि केवल 4.3 एमबी आकार की है, कुंजी शब्द JAF-Safe के माध्यम से खोजकर केवल 30-40 सेकंड

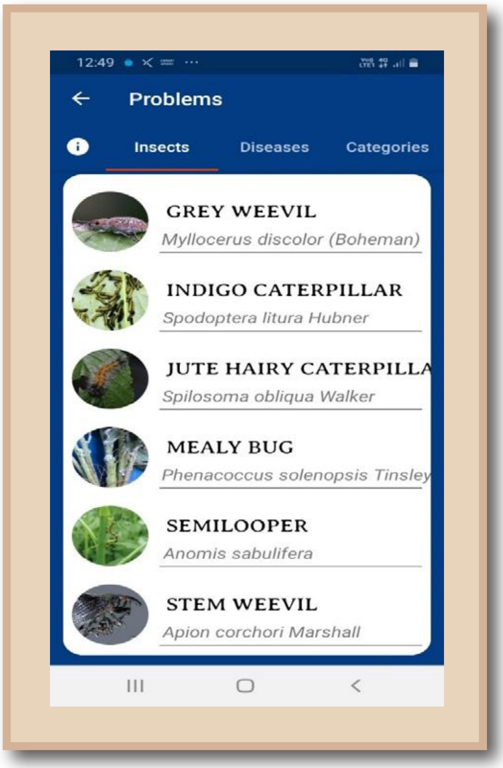

जेएएफ – सेफ एप्प का स्क्रीनशॉट

जेएएफ – सेफ एप्प का प्रतीक चिन्ह

में किया जा सकता है। जेएएफ - सेफ एप्प की सामग्री तक पहुंचने के लिए मोबाइल डिवाइस में स्थित जेएएफ – सेफ आइकन स्पर्श करने से इस एप के अन्य बिन्दुओं पर जानकारी ली जा सकती है।

जेएएफ – सेफ एप्प का उपयोग का तरीका

जेएएफ – सेफ आइकन पर क्लिक करने के बाद एप्प वेलकम पेज खुलना है और 3-4 सेकंड के बाद यहां नया पेज खुल जाएगा, आपको "डायग्नोज़ योर क्रॉप" के रूप में दो बटन मिलते है। "अपनी फसल का निदान करें" बटन में आपके पास अपनी फसल का नाम, फसल अवस्था और क्षति के लक्षण हैं। दूसरे बटन में आपके पास "जूट" के रूप में बटन है, जहां आपको सभी प्रमुख कीटों की सूची मिलती है और प्रत्येक कीट एवं रोग का "विवरण और जीवन चक्र", "पहचान", "नुकसान की प्रकृति" और प्रबंधन के रूप में विभिन्न बटन के साथ जानकारी है। फसल आइकन "जूट" से सभी पटसन कीटों के एकीकृत प्रबंधन के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए सीधे 'आईपीएम' विकल्प का चयन किया जा सकता है।

जेएएफ – सेफ एप्प के फायदे

जेएएफ – सेफ पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों में कीट और रोग प्रबंधन के लिए एक मोबाइल एप्प है। यह एप्प किसान एवं अन्य उपयोगकर्ताओं के लिए पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसल में सर्वोत्तम कार्यशाला प्रथाओं, पहचान पर जानकारी, निवारक उपायों और विभिन्न कीट प्रबंधन कार्रवाई के विकल्पों के विषय में जानकारी प्रदान करता है। इस तरह फसल में यह कीट एवं रोग के प्रबंधन की लागत को कम करता है तथा कीट से होने वाले नुकसान को भी कम करता है। कीट प्रबंधन में कीटनाशकों के किफायती और सुरक्षित उपयोग बहुत महत्वपूर्ण है। इस तरह के एप्प का उपयोग पटसन किसानों के साथ क्षेत्र में फ्रंटलाइन कार्यक्रमों में काम करने वाले कई हितधारकों द्वारा किया जा सकता है। इस दिशा में पटसन एवं समवर्गीय फसलों में किसान जेएएफ - सेफ एप्प का उपयोग करके अपने संसाधन का समुचित उपयोग कर सकते है।

पटसन के आनुवांशिक विविधता में वृद्धि हेतु आण्विक तकनीकें

प्रतीक सत्या, दीपनारायण साहा, शुभोजित दत्ता, सोहम राय, विकास मंगल एवं जितेंद्र कुमार मीना
भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

भूमिका

पटसन (*कोरकोरस कैप्सुलेरिस* - सफेद पटसन, *कोरकोरस ओलिटोरियस* – तोषा पटसन, फेमिली – मालवेसी) सबसे महत्वपूर्ण फ्लोएम रेशे वाली फसल है। पटसन उगाने के लिए भारतीय उपमहाद्वीप में अद्वितीय भौगोलिक और जलवायु स्थितियां हैं जिसके फलस्वरूप 95% से अधिक पटसन भारत के गंगेटिक डेल्टा (7.7 लाख हैं.) और बांग्लादेश (7.5 लाख हैं.) में उगाया जाता है जबकि बाकी थोड़ा बहुत चीन (8265 हैं.), नेपाल (7607 हैं.), जिम्बाब्वे (4456 हैं.), उज्बेकिस्तान (1821 हैं.) और मिस्र (878 हैं.) मे उगाया जाता है (एफएओ, 2020)। इस क्षेत्र का 90% से अधिक क्षेत्र अपनी उच्च रेशा उत्पादकता के कारण *कोरकोरस ऑलिटेरियस* के अंतर्गत आता है। *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* की खेती ज्यादातर पूर्वोत्तर भारत, बांग्लादेश के उत्तरी क्षेत्रों और चीन में की जाती है। रेशे के साथ - साथ जलवायु लचीला फ़सल और विविध उपयोग होने के कारण सभी का ध्यान इसकी तरफ जा रहा है और इसके अलावा संश्लेषित रेशे और पॉलीप्रोपाइलीन आधारित उत्पादों को प्रतिस्थापित करने के लिए पटसन आज एक नए बाज़ार की संभावनाएँ पैदा कर रहा है। निरंतर फसल सुधार और तकनीकी आविष्कारों के वजह से भारत मे रेशे की उपज (25.5 कु./हैं.) और उत्पादन (1.95 मिलियन टन) बांग्लादेश की तुलना में, रेशे की उपज (21.3 कु./हैं.) और उत्पादन (1.61 मिलियन टन) से काफी अधिक है (एफएओ, 2020)। आजादी से पहले भारत में पटसन का कुल उत्पादन 5.7 लाख हेक्टेयर (तत्कालीन अविभाजित भारत) के क्षेत्र से लगभग 0.6 मिलियन टन गांठ था जहां की औसत उपज 10 कु./हैं. थी।

70 वर्षों के भीतर पटसन की उत्पादकता (>150%) में उल्लेखनीय सुधार हुआ है जिसके कारण इसका उत्पादन 7.6 लाख हैं. के क्षेत्र से 1.9 मिलियन टन तक बढ़ गया है। हालाँकि गिरते क्षेत्र के कारण पूरी दुनिया में पटसन उत्पादन में स्थिरता आ गयी है। इसके अलावा पिछले कुछ वर्षों में रेशे की पैदावार में बहुत अधिक वृद्धि नहीं हुई है। उपज का ठहराव केवल पटसन के लिए अद्वितीय नहीं है क्योंकि चावल, गेहूं, दलहन, तिलहन और कपास जैसे अन्य फसलें भी अपनी उपज की सीमा तक पहुंच गई हैं। केवल कुछ तरीको से उपज अवरोध को तोड़ा जा सकता है या तो ज्यादा से ज्यादा संकर ओज के माध्यम से, आनुवांशिक आधारों को व्यापक बनाने से, उपज को नियंत्रित करने वाले जीनों के विशिष्ट हेरफेर के माध्यम से या विशिष्ट जीनों को एक उच्च उपज वाले लेकिन अतिसंवेदनशील किस्म मे शामिल करने से। पटसन जैसी फसल में जहाँ आनुवांशिक विविधता और संकर ओज बहुत कम है, उपज अवरोध को तोड़ने के लिए आनुवांशिक आधार को बढ़ाना ही सबसे अच्छा विकल्प है|

1950-1970 के दौरान अफ्रीकी जीन पूल को भारतीय प्रजातियों मे समावेश से पटसन में आनुवांशिक आधार को व्यापक रूप मे बढ़ाने मे सफलता पहले ही मिल चुकी है जिसके कारण समय से पहले फूल नहीं देने वाले, उच्च उपज, छोटी अवधि (120 दिन) की प्रजातियाँ जैसे कि जेआरओ 524, जेआरओ 7835 और जेआरओ 8432 विकसित की जा चुकी है जो की भारत और बांग्लादेश के गंगा डेल्टा के पटसन – धान फसल प्रणाली में पूरी तरह से फिट हो जाती है| इसके कारण वस्तुतः पटसन फसल को खेती से बाहर होने से बचाया जा सका क्योंकि पटसन उगाने वाले सभी किसानों ने शुरू में हरित क्रांति के मद्देनजर फोटो-असंवेदनशील उच्च उपज वाले चावल की खेती की ओर जाना चालू कर दिया था। आगे की उपज में सुधार पारंपरिक प्रजनन प्रयासों के माध्यम से किया गया था जिसके फलस्वरूप जेआरओ 204, सीओ 58 और इरा जैसी उच्च उपज देने वाली किस्मों के साथ-साथ एस 19, जेआरओएम 1 और जेआरओजी 1 जैसी महीन रेशे वाली किस्मों का विकास किया गया था। हालांकि, उपज वृद्धि में प्रगति धीमी अर्थात केवल 15-20% थी। इस प्रकार आनुवांशिक आधार को और बढ़ाने मे नयी तकनीकों की आवश्यकता है जहां आण्विक प्रौद्योगिकियां बहुत मदद कर सकती हैं।

आण्विक तकनीकों जैसे लक्षित उत्परिवर्तन, आण्विक प्रजनन, जीनोम विश्लेषण और जीनोम संपादन आधुनिक उपकरणों और तकनीकों का संग्रह है जो पारंपरिक आनुवांशिक सुधार रणनीतियों को बढ़ाने मे एवं उनमे और ज्यादा सूक्ष्मता प्रदान करने मे उपयोग की जाती हैं। पटसन में व्यापक रूप से आनुवांशिक आधार बढ़ाने के लिए इनमें से कई तकनीकों का सक्रिय रूप से उपयोग किया जा रहा है।

पटसन में आनुवांशिक विविधता का आकलन करने के लिए आण्विक तकनीक

किसी भी फसल में आनुवांशिक आधार व्यापक बनाने से पहले जीन पूल में मौजूद आनुवांशिक विविधता का अनुमान लगाना आवश्यक है। पटसन की दोनों प्रजातियां शायद ही आपस मे क्रॉस कर पाती हैं और इसकी जंगली प्रजातियां के साथ इनका संकरण भी ज्यादा सफल नहीं होता है। इस प्रकार पटसन का प्राथमिक जीन संग्रह प्रजाति-विशिष्ट है।

पटसन में आनुवांशिक विविधता की स्थिति

हमारी प्रमुख फसलें जो कि लगभग 5000 साल पहले से खेती के उपयोग मे आ रही है, पटसन की खेती रेशे के रूप मे केवल पिछले 1000 वर्ष से प्रारम्भ हुई है और इसकी बड़े पैमाने पर खेती के बारे में 300 साल पहले ब्रिटिश भारत के संरक्षण के तहत पता लगाया जा सकता है। चूंकि पुष्पन चरण की शुरुआत से पहले इस फसल को काटा जाता है इसलिए गैमीटिक सहज म्यूटेशन पूर्वजो से नहीं मिलते हैं। इस प्रकार पटसन मे जो भी आनुवांशिक परिवर्तनशीलता पायी जाती है वो केवल इसके जननद्रव्य संग्रह में भीतर मौजूद होती है और कुछ हद तक पूर्वी अफ्रीका में मौजूद प्राकृतिक

विविधता के कारण है, जो इस फसल का उत्पत्ति केन्द्र है। अफ्रीकी देशों से एकत्र किए गए संग्रह का मूल्यांकन आनुवांशिक विविधता में कोई खास अंतर नहीं दिखाता है। चीन से संग्रह में थोड़ी बहुत आनुवांशिक विविधता मौजूद है (h_e = 0.32)। चीन और भारत दोनों ने रूपात्मक और आण्विक लक्षण का उपयोग करके मौजूदा संग्रह से कोर संग्रह विकसित करने का प्रयास किया है चीन में 60 *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* जीनोटाइप्स का एक कोर संग्रह बनाया गया जबकि 34 *कोरकोरस ओलिटोरियस* जीनोटाइप्स का एक और कोर भारतीय संग्रह से विकसित किया गया था। आण्विक मार्कर आधारित आनुवांशिक विविधता का अनुमान दिखाता है कि अफ्रीकी, भारतीय और चीन के पटसन जननद्रव्यों में कम आनुवांशिक विविधता है जो पटसन में आनुवांशिक सुधार के लिए सबसे बड़ी समस्या है।

विविधता विश्लेषण के लिए तकनीक

पटसन में आण्विक मार्करों के कई समूहों का उपयोग आनुवांशिक विविधता विश्लेषण के लिए किया गया है जैसे कि आरएपीडी, आईएसएसआर, एसआरएपी, एसएसआर, जीन-विशिष्ट मार्कर और एसएनपी मार्कर शामिल हैं। पटसन में 10,000 से अधिक एसएसआर की पहचान की गई है और पटसन में 2000 से अधिक उच्च गुणवत्ता वाले मार्कर विकसित किए गए हैं। इसके अलावा 2000 से अधिक एएफएलपी मार्कर और 1100 आरएडी अनुक्रम (प्रतिबंध साइट से जुड़े डीएनए अनुक्रमण) मार्कर भी पटसन में विकसित किए गए हैं। एक पटसन मार्कर डेटाबेस (जूट मार्कर डीबी) भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (क्रिजैफ) द्वारा विकसित किया गया है जो 2000 से अधिक एसएसआर और 900 से अधिक इंडेल्स की सूचना प्रदान करता है। पटसन में आनुवांशिक विविधता का अनुमान वंशावली वृक्ष में दर्शाई गई दूरी आधारित क्लस्टरिंग तकनीकों के माध्यम से लगाया गया है। अध्ययन के तहत जीनोटाइप के बीच आण्विक मार्करों के बैंड / एलील साझाकरण से पैटर्न की गणना स्वयं की जाती है। इन सभी अध्ययनों से ज्ञात हुआ की पटसन में दो प्रजातियों के बीच तो उच्च आनुवांशिक दूरी है लेकिन एक ही प्रजाति या समूह के भीतर बहुत कम विविधता है। हालाँकि, भारत की कृषित पटसन अफ्रीकी मूल की पाई गई है।

पटसन की आबादी के निर्माण का विश्लेषण

चूंकि पटसन प्राकृतिक रूप से अफ्रीका में विकसित हुआ था लेकिन भारतीय उपमहाद्वीप में रेशा फसल के रूप में इसे उगाया गया तथा और वहाँ से कई देशों में पुन: ले जाया गया | इसकी आबादी के संरचना विश्लेषण की स्पष्ट समझ के बिना प्रजनन आबादी के वंश का पता लगाना मुश्किल है। जेनेटिक मार्कर आधारित समुदाय जनसंख्या संरचना विश्लेषण से पता चला है कि भारतीय पटसन की आबादी अफ्रीकी आबादी की तुलना में अलग है। इस अध्ययन से और बाद में आरएडी – एसएनपी आधारित संरचना विश्लेषण से यह भी पता चला कि भारतीय *कोरकोरस ऑलिटोरियस* आबादी में अफ्रीकी *कोरकोरस ऑलिटोरियस* आबादी की तुलना में उच्च आनुवांशिक विविधता है जो भारतीय आबादी को उच्च अनुकूलता प्रदान करती है। इसीलिए भारतीय और अफ्रीका के हॉटस्पॉट क्षेत्रों से नए जीनोटाइप के संग्रह की आवश्यकता है क्योंकि काफी मात्रा मे अफ्रीकी x भारतीय संकरण के बावजूद मौजूदा विविधता आनुवांशिक आधार को और वृहद करने के लिए पर्याप्त नहीं होगी । आरएडी – एसएनपी आधारित संरचना विश्लेषण से यह भी पता चला है कि अन्य देशों में मौजूद *कोरकोरस ऑलिटोरियस* समुदाय भारतीय प्रजातियों से विकसित हुई है |

लक्षण विशिष्ट पहचान के लिए आण्विक तकनीकें

मार्कर का विकास और लिंकेज मैपिंग

आनुवांशिक भाषा में आण्विक मार्कर, डीएनए अनुक्रम स्तर पर वह हिस्सा है जो किसी भी प्रजाति की पहचान करने में मदद करता है और विशिष्ट फेनोटाइपिक लक्षणों के साथ जोड़ा जा सकता है। पौधों में आण्विक मार्करों के कई अनुप्रयोग है, विशेष रूप से आनुवांशिक विविधता मूल्यांकन, जर्मप्लाज्म विशेषीकरण, वर्गानुवंशिक क्रम-विकास, क्यूटीएल और लिंकेज मैपिंग, जीनोमिक चयन एवं मार्कर-सहायक प्रजनन इत्यादि। विभिन्न आण्विक मार्करों में, सिंपल सीक्वेंस रिपीट (एसएसआर) और सिंगल न्यूक्लियोटाइड पॉलीमोर्फिक (एसएनपी) लोसाई, लिंकेज मैपिंग और मार्कर-सहायक प्रजनन के लिए चुनिंदा मार्कर हैं। लिंकेज मैप, गुणसूत्रों पर आण्विक मार्करों का एक ऐसा मैप या क्रम है जो भौतिक स्थिति के बजाय सहलग्नता के आधार पर व्यवस्थित है। लिंक्ड लोसाई इस पर तय किया जाता है की वह कितनी बार वंशगत में प्राप्त हुआ है। लोसाई जितने सहलग्न होते है उन्हें एक साथ वंशगत में मिलने की संभावना अधिक है। लिंकेज मैप की दूरी सेंटी मॉर्गन (सी एम) के रूप में दर्शाई जाती है।

शुरुआती दौर में पटसन में पर्याप्त जीनोमिक संसाधन न होने के कारण, एसएसआर-समृद्ध लाइब्रेरी सिक्वेंसिंग द्वारा एसएसआर जैसे आण्विक मार्कर को विकसित किया गया था। तब पटसन में 3000 से अधिक एसएसआर लोसाई की पहचान की गई एवं उनमे से लगभग 417 पॉलीमोर्फिक एसएसआर प्राइमरों को विकसित किया गया था। लगभग 36 एसएसआर लोसाई के उपयोग से ऑलिटोरियस प्रजाति के छह लिंकेज ग्रूप का पहला लिंकेज मैप तैयार किया गया था जो कुल 784.3 सेंटी मॉर्गन आनुवांशिक दूरी का था। समसामयिक में, आरएपीडी, आईएसएसआर और एसआरएपी मार्कर जैसे अपेक्षाकृत कम विश्वसनीय आण्विक मार्करों का उपयोग करते हुए कैप्सुलेरिस पटसन के चीनी किस्म में एक लिंकेज मैप भी विकसित किया गया था।

आगामी पीढ़ी वाले सिक्वेंसिंग प्रौद्योगिकियों के लोकप्रिय होने के साथ पटसन में विभिन्न आण्विक मार्करों का निरंतर विकास किया गया है। पिछले कुछ वर्षों में भारत, बांग्लादेश और चीन से पटसन के कई सारे ट्रांसक्रिप्टोम एवं जीनोम सीक्वेंस प्रकाशित किए गए जिसके परिणामस्वरूप अनगिनत आण्विक मार्कर बने। इसमें ईएसटी-एसएसआर, न्यूक्लीयर एसएसआर, ऑर्गेनेल जीनोम-व्युत्पन्न एसएसआर, इन्ट्रोन-व्युत्पन्न मार्कर, एसएनपी एवं इंडेल्स भी शामिल है। इन कई सारे मार्करों का पटसन प्रजनन में उपयोग के लिए एक 'जूट मार्कर डेटाबेस' भी तैयार किया गया है।

रेस्ट्रिक्शन-साइट-एसोसिएटेड डीएनए (आर ए डी) सिक्वेंसिंग द्वारा ऑलिटोरियस पटसन में 500 से अधिक एसएनपी लोसाई

विकसित किये गए। उन एसएनपी मार्करों से सात लिंकेज ग्रूप का एक विस्तृत लिंकेज मैप तैयार किया गया जो 0.72 सेंटी मॉर्गन के औसत मार्कर अंतराल के साथ कुल 358.5 सेंटी मॉर्गन का है। यह मैप 87.0% पटसन जीनोम को कवर करता है। इस क्यूटीएल क्षेत्रों में कुछ संभावित जीनों की भी पहचान की गई है। तत्पश्चात् चीनी मूल के कैप्सुलरिस पटसन में भी 11 लिंकेज ग्रूप का एक लिंकेज मैप बनाया गया जिसमें 913 पॉलीमोर्फिक एसएनपी मार्कर शामिल है। यह मैप कुल 1621.4 सेंटी मॉर्गन लंबाई का है और मार्कर प्रति औसत अवधि 1.61 सेंटी मॉर्गन है। वर्तमान समय में पटसन जीनोम से कई हजारों न्यूक्लीयर एसएसआर मार्कर को खोजा गया हैं जिनका यथोचित उपयोग न केवल क्यूटीएल मैपिंग और पटसन प्रजनन में किया जा सकता है बल्कि जीनोम असेंबली तथा पटसन जीनोम तुलना में भी मदद करेगा।

जीनोमिक संसाधन का विकास

जीनोम अनुक्रमण

एक जीव में सभी जीनों का कुल योग इसके 'जीनोम' के रूप में जाना जाता है। नई तकनीकों के विकास ने जीनोम अनुक्रमण को नाटकीय रूप से सस्ता और आसान बना दिया है। पटसन के जीनोम की सीक्वेंसिंग फ्लोएम रेशे के विकास के तंत्र को समझने, रेशा के गुणों को संशोधित करने के लिए और आण्विक-आनुवांशिक दृष्टिकोणों के विस्तार के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण कदम था (इस्लाम और सहयोगियों 2017, सरकार और सहयोगियों 2017)। प्रमुख भारतीय तोषा पटसन किस्म, जेआरओ - 524 के पूरे 209.4 एमबीपी जीनोम में कुल 47,434 प्रोटीन-कोडिंग जीन डिकोड किए गए है। इस्लाम एवं अन्य द्वारा किया गया अध्ययन दिखाता है कि तंतुओं में टीएफबी एमवाईबी 83, वोक्स 4 (वुशेल संबंधित होमोबॉक्स 4), एपीएल (अल्टेरेड फ्लोएम डेव्लपमेंट) और होमोबॉक्स जीन एच 2222 की अभिव्यक्ति रेशा में अधिक है। इस्लाम और सहकर्मियों ने पटसन में लिग्निन-बायोसिंथेटिक जीन के विस्तार पर भी प्रकाश डाला है उदाहरण के लिए 4-कुअरामेट: सीओए–लाइगेज (4 सीएल), सिनामोयल –को ए रिडक्टेज़ (सीसीआर), ट्रांस-कैफ़ेयॉयल-ओएक्सए 3-ओ- मेथिलट्रांसफेरेज (सीसीओएओएमटी) और कैफिक एसिड ओ-मिथाइलट्रांसफेरेज (सीओएमटी)। इस अध्ययन ने द्वितयक कोशिका भित्ति के जैव संश्लेषण में सेस ए 7 (और सेस ए 4) की भूमिका की पुष्टि की। यह हाई-थ्रूपुट जीनोम विश्लेषण रेशा फसलों के अध्ययन के लिए बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह विभिन्न विशेषताओं के साथ दो पटसन किस्मों की तुलना करता है। तोषा पटसन के रेशे में सफेद पटसन की तुलना में अधिक लिग्निन और कम सेल्युलोज होते है। सफेद पटसन कीटों के प्रति अधिक सहिष्णु है, लेकिन तोषा पटसन की तुलना में बाढ़, सूखा और लवण तनाव के लिए कम संवेदनशील है। इन अलग-अलग जैविक एवं अजैविक तनाव प्रतिक्रियाओं के आण्विक-आनुवांशिक विश्लेषण के लिए भी जीनोम का अध्ययन जरूरी हैं।

ट्रांसस्क्रिप्टोम अनुक्रमण

ट्रांसस्क्रिप्टोम एक विशेष ऊतक में मौजूद ट्रांसक्रिप्ट का कुल समूह है और बाहरी पर्यावरणीय परिस्थितियों के साथ भिन्न हो सकता है क्योंकि इसमें कोशिका के सभी एमआरएनए शामिल हैं। ट्रांसक्रिप्टोम अनुक्रमण जीन-अभिव्यक्ति का आकलन करने के लिए एक तेज और सुविधाजनक तकनीक है।

जेआरसी 212 की एक उत्परिवर्तित लाइन के रेशे में लिग्निन की कम मात्रा होती है लेकिन सेल्यूलोज की मात्रा अधिक होती है। इस उत्परिवर्ती और जेआरसी 212 के ट्रान्सक्रिप्टोम अनुक्रमण ने कई जीनो के आइसोफॉर्म की खोज को संभव बना दिया है (चक्रवर्ती और सहयोगियों, 2015)। उदाहरण के लिए इस अध्ययन में शिकोटेम-एरोमैटिक एमिनो एसिड और 43 मोनोलिग्नोल मार्गों में शामिल जीन के 37 आइसोफोर्म्स की पहचान की गई। इसके अलावा इसने पीएएल 1 (फेनिलएलनिन अमोनिया-लीसेज़) के एक उत्परिवर्ती समस्थानिक का पता लगाया जिसे प्रारंभिक विकास चरणों में नियंत्रित किया गया था। दिलचस्प बात यह है कि इस अध्ययन ने उत्परिवर्ती तंतुओं में सेल्युलोज सिन्थेज जीन सेस ए 7 के साथ एक एफएलए प्रोटीन (एफएलए 6) सह-विनियमित जीन कोडिंग की भी पहचान की गयी है। यह इंगित करता है कि एफएलए 6, सेस ए 7 के साथ ऑर्केस्ट्रेट कर सकता है जो ज़ाइलान-प्रकार के तंतुओं में एस-परत का जमाव है। पटसन का एफएलए 6 , एरबिडोप्सिस एफएलए 11 का ऑर्थोलॉग है। सत्या और सहयोगियों (2018) ने उत्परिवर्ती और जंगली प्रकार के पटसन से हाइपोकोटाइल ट्रांसक्रिप्टोम उत्पन्न किया और पटसन हाइपोकोटाइल में व्यक्त गेलेक्टोसिडेज की पूरी सारणी का विशेष अध्ययन किआ है। इस अध्ययन ने हाइपोकोटाइल विकास में बीटा - गेलेक्टोसिडेज की महत्वपूर्ण भूमिका का संकेत दिया। यांग और सहयोगियों (2020) ने अलग-अलग विकास चरणों के दौरान तोषा पटसन का व्यापक ट्रांसक्रिप्टोम विश्लेषण किया। उन्होंने तना, फ्लोएम, फल, फूल और पत्ती में लगातार अपरेगुलेटेड और डाउनरेगुलेटेड जीन की खोज की। इससे पहले उन्होंने तुलनात्मक ट्रांसक्रिप्टोम विश्लेषण के माध्यम से नमक और सूखे के प्रति तनाव के लिए जीन और मेटाबोलिक पाथवे की खोज की है (यांग और सहयोगियों, 2017)। चौधरी और सहयोगियों (2019) ने फोटोपेरोडिक प्रतिक्रियाओं से संबंधित जीन की पहचान की है। उन्होंने विलंबित फूलों वाले म्युटेंट (पीएफआर 59) और इसके मूल प्रभेद जेआरओ -204 के तना शीर्ष ऊतक के आरएनए – अनुक्रम का उपयोग किया। आण्विक-आनुवांशिक जोड़-तोड़ के द्वारा बास्ट तंतुओं की रचना और गुणों में काफी बदलाव की संभावना को कुछ फाइबर संयंत्रों जैसे फ़्लेक्स में फाइबर सेल वाला संरचना में परिवर्तन द्वारा अच्छी तरह से चित्रित किया गया है। इस छोर की ओर, सफ़ेद पटसन का एक डी नोवो ट्रांसक्रिप्टोम ने सेल्युलोज जैवसंश्लेषण में शामिल प्रमुख बास्ट-संबंधित जीन की पहचान की है (झांग और सहयोगियों, 2015)। शफरिन और सहयोगियों (2017) ने दो मोनोलिग्नॉइड बायोसिंथेटिक जीनों के डाउनरेगुलेशन द्वारा पटसन में लिग्निन सामग्री को कम करने का प्रयास किया।

जीनोम अनुक्रमण ट्रांसक्रिप्टोम विश्लेषण के साथ पटसन में प्रमुख जैवसंश्लेषक मार्गों के आण्विक आधार की समझ में सुधार हुआ है और बास्ट फाइबर जैवसंश्लेषण के बारे में हमारी समझ और बेहतर हुई है। साथ साथ यह फाइबर के सुधार के लिए जीनोमिक प्रौद्योगिकियों के उपयोग के लिए मंच भी प्रदान करता है।

आनुवांशिक आधार मे वृद्धि हेतु आण्विक तकनीक

उत्परिवर्तन - यादृच्छिक उत्परिवर्तन एवं टिलिंग

एक जीव के जीनोम के न्यूक्लियोटाइड अनुक्रम में किसी भी परिवर्तन को उत्परिवर्तन कहा जाता है। डीएनए पुनरावृत्ति तथा समसूत्री एवं अर्धसूत्री कोशिका विभाजन के दौरान या फिर और किसी अन्य कारणों से डीएनए में किसी भी तरह बदलाव ही उत्परिवर्तन का कारण होता है। कुछ भौतिक या रासायनिक एजेंटों के माध्यम से उत्परिवर्तन को प्रेरित किया जा सकता है। जर्मप्लाज्म के आनुवांशिक आधार को विस्तृत करने के लिए पादप प्रजनक अक्सर उत्परिवर्तन का उपयोग करते हैं। उत्परिवर्तित लाइनों को सीधे नई किस्मों के रूप में या प्रजनन कार्यक्रमों में विविधता लाने के लिए एक आधार के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

टार्गेटिंग इंडुसेड लोकल लेशंस इन जीनोम यानी टिलिंग जीनोम में यादृच्छिक उत्परिवर्तन करने की एक बेहतरीन पद्धति है जिसके उपरांत उत्परिवर्तित लोसाइओं को जीनोम-वाइड स्तर पे खोज करते है। टिलिंग सामान्यतः इथाइल मीथेनसल्फोनेट (ईएमएस) द्वारा रासायनिक उत्परिवर्तन करता है जो पॉइंट म्युटेशन उत्पन्न करता है। ईएमएस द्वारा जो पॉइंट म्यूटेशन होता है, उसमे मिस-सेंस एवं ट्रान्केसन जैसा उत्परिवर्तन का असर दिखता है जो इंसर्शनल उत्परिवर्तन से भी अधिक फलप्रसू होता है। टिलिंग पॉपुलेशन की स्क्रीनिंग एवं परिवर्तित न्यूक्लियोटाइड की पहचान उन्नत आण्विक तकनीकों का उपयोग करके की जा सकती है।

एक कम लागत तथा उच्च क्षमता सम्पन्न तकनीक जिसमें सेल 1 एंडोन्यूक्लिएज बेमेल न्यूक्लियोटाइड की पहचान करती है एवं उसे एंजाइमैटिक पाचन द्वारा काटती है। तत्पश्चात टिलिंग से उत्पन्न परिवर्तित न्यूक्लियोटाइड की पहचान खंडित डीएनए की एल 1– सीओआर जेल विश्लेषण प्रणाली के माध्यम से की जाती है। कई अन्य वैकल्पिक तकनीकों के द्वारा भी अभी टिलिंग से उत्पन्न पॉइंट म्युटेशन का पता लगाया जा सकता है जैसे उच्च रिज़ॉल्यूशन मेल्टिंग (एच आर एम) विश्लेषण एवं अगली पीढ़ी सिक्वेंसिंग आदि। अगली पीढ़ी सिक्वेंसिंग के बाद जीनोम-वाइड स्तर में इन सिलिको प्रणाली द्वारा पॉइंट म्युटेशन का पता लगाया जाता है।

फसल सुधार में टिलिंग के बहुत अनुप्रयोग हैं। टिलिंग द्वारा पहचाने गए उत्परिवर्तन स्थायी रूप से अगली पीढ़ी में पाये जा सकते है, इसलिए इसे पादप प्रजनन में प्रत्यक्ष रूप से उपयोग किया जा सकता है। क्योंकि पटसन में आनुवांशिक आधार संकीर्ण है, टिलिंग द्वारा पटसन में आनुवांशिक आधार को बढ़ाने की असीम संभावनाएं हैं। पटसन में ईएमएस की उपचार मात्रा को मानकीकृत किया गया है। इसके अलावा पटसन का जीनोम अनुक्रम भी अब उपलब्ध है। यह आगे नेक्स्ट जेनेरेशन सिक्वेंसिंग के द्वारा कुशलता पूर्वक उत्परिवर्तन स्क्रीनिंग मे भी मदद करेगा । इस प्रकार से पटसन में आनुवांशिक आधार को बढ़ाने के लिए एवं प्रजनन प्रणाली में सुधार लाने के लिए टिलिंग का अनुप्रयोग बहुत महत्व रखता है।

कॉम्प्लेक्स क्रॉस - मैजिक और अन्य क्रॉस

एक आबादी में आनुवांशिक परिवर्तनशीलता को बढ़ाने के लिए जननिक पुनर्योजन की संभावना बढ़ाना भी एक और तरीका है। हालांकि यह कोई आण्विक तकनीक नहीं है लेकिन आण्विक मार्करों का उपयोग प्रजनन योजनाओं की गति और सटीकता बढ़ाने के लिए किया जा सकता है जो कि नयी जनसंख्या के विकास में, और अधिक जननिक पुनर्योजन प्रदान करने में उपयोग हैं। दो से ज्यादा पैरेंट्स का उपयोग करके पुर्नयोजन इंब्रेड लाइंस बनाने से उनका आनुवांशिक आधार ज्यादा रेकोम्बिनेशन होने से और चौड़ा हो जाता है । इसी तरह, आठ - पैरेंट्स आरआईएल बनाने से पुनर्संयोजन बढ़ता है। हालाँकि अधिक पुनर्संयोजन होने से समयुग्मकी स्थिति प्राप्त करने के लिए और अधिक पीढ़ी की आवश्यकता होती है। आगे पुनर्संयोजन और बढ़ाने के लिए मल्टी–पैरेंट्स आबादी की उन्नत पीढ़ियों के बीच और ज्यादा इंटर क्रॉस भी किए जा सकते हैं। इस तरह की एक क्रॉसिंग योजना बहु-पैत्रक उन्नत पीढ़ी अंतः-संकरण (एमएजीआईसी) है, जिसे पहली बार 2008 में एरबीड़ोप्सिस में उपयोग किया गया था। मैजिक आबादी में विभिन्न पैतृक लाइनों के अनुक्रमण का सही पता करने के लिए व्युत्पन्न जनसंख्या की जनसंख्या संरचना को निर्धारित करने के लिए आण्विक मार्करों का उपयोग किया जाता है। । यह मैजिक लाइनों में प्रत्येक पैतृक लाइनों के योगदान की सूचना प्रदान करता है। 20 पैतृक लाइनों को क्रॉस करने से एवं उसके साथ उन्नत पीढ़ियों मे अंतः- संकरण करने से भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (क्रिजैफ) में पटसन की एक मैजिक आबादी विकसित की गई है। वर्तमान में यह एफ–6 पीढ़ी पर है और मूल्यांकन के अधीन है।

ट्रांसजेनिक

चूंकि पटसन के लिए आनुवांशिक परिवर्तनशीलता और व्यापक संकरण का दायरा बहुत कम है, इसलिए ट्रांसजेनिक तकनीक आनुवांशिक आधार को चौड़ा बनाने के लिए एक सही विकल्प है। हालांकि, पटसन के आनुवांशिक अभियांत्रिकी के लिए सबसे बड़ी चुनौती उत्तक संवर्धन के दौरान दोनों प्रजातियों का कम पुनरुदभवन है। *कोरकोरस ऑलिटेरियस* का *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* की तुलना में और भी कम पुनरुदभवन होता है। सफेद पटसन का पहला परिवर्तन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा बायोलिस्टिक पार्टिकल डिलीवरी सिस्टम के माध्यम से बार जीन (एन्कोडिंग बायलफोस प्रतिरोध) को डालकर किया गया था। तब से केवल कुछ ही प्रोटोकॉल (लगभग 5-6) प्रकाशित किए गए हैं और लगभग किसी भी अन्य कार्यकर्ता द्वारा इसको दुबारा से सत्यापित नहीं किया गया है। 2009 में पहला सफल ट्रांसजेनिक परिवर्तन *कोरकोरस ऑलिटोरियस* (किस्म ओ-9897 और ओ-72) मे *एग्रोबैक्टिरियम ट्यूमेफेसियन्स* का उपयोग कर जीयूएस रिपोर्टर जीन को डालकर किया गया था। एक और इन-प्लांट परिवर्तन प्रोटोकॉल बांग्लादेश के ढाका विश्वविद्यालय से प्रकाशित किया गया है। चट्टोपाध्याय और सह-कार्यकर्ताओं ने 2010 में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी मे *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* के लिए *एग्रोबैक्टिरियम राइज़ोजीन्स* बेस ट्रांसजेनिक बालों वाली जड़ प्रणाली को प्रकाशित किया इसके लिए, जेआरसी 321 जीनोटाइप लिया गया जबकि शीर्षस्थ विभज्योतक या शूट टिप *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* में पसंदीदा एक्सप्लांट रहा। पटसन मे संशोधित एग्रोनोमिक लक्षणों के साथ ट्रांसजेनिक का विवरण बहुत ही कम है। फिर भी, बांग्लादेश के ढाका विश्वविद्यालय से हसीना खान के

समूह ने कोरकोरस ऑलिटोरियस किस्म ओ-9897 में एमआई आरएनए-और एचपी आरएनए द्वारा - मोनोलिग्नोल बायोसिंथेटिक पाथवे जीनों की मध्यस्थता डाउन-रेगुलेशन करके लिग्निन की मात्रा में कमी प्रकाशित की है। जबकि कलकत्ता यूनिवर्सिटी, भारत के एस.के. दत्ता ग्रुप ने *कोरकोरस कैप्सुलेरिस* किस्म जेआरसी 321 मे ग्लूफ़ोसिनेट शाकनाशी प्रतिरोध (ट्रांसजीन: बार और पीएटी), स्टेम रोट प्रतिरोध (ट्रांसजीन: सीएचआई 11) और लेपिडोप्टेरान कीट प्रतिरोध (ट्रांसजीन: क्राइ 1 एबी /एसी) के परिवर्तन को प्रकाशित किया। पटसन में ट्रांसजेनिक प्रौद्योगिकी के लाभ के लिए एक अच्छे प्रोटोकॉल को विकसित करने की आवश्यकता है।

जीनोम संपादन

आधुनिक जीव विज्ञान में क्रिस्पर/ केस 9 के माध्यम से जीनोम संपादन एक शक्तिशाली तकनीक के रूप में उभर रहा है। सामान्य तौर पर क्रिस्पर/ केस तंत्र लक्षित डीएनए को काटने के लिए 20 न्यूक्लियोटाइड्स के एक छोटे सिंथेटिक गाइड आरएनए का उपयोग करता है। तत्पश्चात केस 9 न्यूक्लिएज एंजाइम की सहायता से प्रोटोस्पेसर ऐडजासेंट मोटिफ (पीएएम; आमतौर पर 5' एनजीजी) से सटे 3-4 न्यूक्लियोटाइड के बाद एक डबल स्ट्रेन्डेड ब्रेक उत्पन्न करता है। इस क्रोमोसोमल ब्रेक की मरम्मत करने हेतु सेलुलर सिस्टम के अंतर्गत नॉन -होमोलोगस एंड ज्वाइनिंग (एनएचजे) या होमोलॉजी-डिरेक्टेड रिकॉम्बिनेशन (एचडीआर) प्रणाली कार्य करती है। दोनों प्रक्रिया से क्रमानुसार इंसर्शन / डिलीशन (इंडेल्स) या फिर प्रतिस्थापित उत्परिवर्तन उत्पन्न होता है। जीनोम संपादन द्वारा विशिष्ट म्युटेंट बनता है जो ट्रांसजेनिक से बिलकुल विपरीत है। ट्रांसजेनिक में यादृच्छिक इनसर्शन एवं यादृच्छिक फिनोटाइप पाए जाते है। इस प्रकार जीनोम संपादन कार्यात्मक जीनोमिक्स और फसल प्रजनन में एक शक्तिशाली साधन बनता जा रहा है। क्योंकि जीनोम संपादित लाइनों में किसी भी प्रकार का विदेशी डीएनए मौजूद नहीं होता है। वे आनुवांशिक रूप से संशोधित (जीएम) फसलों की तुलना में अपेक्षाकृत कम नियामक प्रक्रियाओं के अधीन हैं। पटसन में जीनोम संपादन एक महत्वपूर्ण भूमिका ले सकता है जैसे - हर्बिसाइड ग्लाइफोसेट सहिष्णु लाइन का विकास करना या महीन रेशा के लिए कम लिग्निन वाली विशिष्ट लाइनों का विकास करना। पटसन में जीनोम संपादन कार्यात्मक अध्ययन और आनुवांशिक सुधार में सहायता के लिए लक्षित जीन नॉकआउट लाइनों का विकास करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। जीनोम संपादन द्वारा पटसन में सेंट्रोमियर इंजीनियरिंग तथा हैप्लॉयड पौधों के विकास की एक दिलचस्प संभावना है। इसके द्वारा संकर प्रजनन के लिए हैप्लॉयड और डाई - हैप्लॉयड लाइनों का तेजी से विकास कर सकते है। हालांकि पटसन में जीनोम संपादन के लिए सबसे बड़ी चुनौती ऊतक संवर्धन से पौधा उत्पन्न करने की कठिनाई में है जिसमें निरंतर शोध किया जा रहा है।

निष्कर्ष

पटसन की खेती के दौरान इसका कोई प्रजनन चरण नहीं होने के कारण आनुवांशिक सुधार के लिए यह एक चुनौतीपूर्ण फसल है। इसलिए अन्य फसल प्रजातियों की तुलना में पटसन में आण्विक तकनीकों के माध्यम से आनुवांशिक सुधार का विस्तार अधिक महत्वपूर्ण है क्यों कि अन्य फसलों मे प्राकृतिक उत्परिवर्तन के कारण आनुवांशिक परिवर्तनशीलता अधिक है। विभिन्न तरीकों में से उत्परिवर्तन आधारित तरीके और उन्नत अंतः- संकरण आधारित रणनीति, पटसन जीन पूल में परिवर्तनशीलता के लिए अच्छा परिणाम रखती है। ट्रांसजेनिक और जीनोम एडिटिंग प्रौद्योगिकियों की पूरी क्षमता उपयोग मे लेने के लिए पटसन मे पौधों के पुनरुत्थान पर अधिक बुनियादी शोध की आवश्यकता है।

विभिन्न क्षेत्रों में सूक्ष्मजीवी मिश्रण (क्रिजैफ सोना) द्वारा पटसन सड़न : एक संकलित अनुभव

बिजन मजुमदार, एस. के. झा एवं आर. के. नायक
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

पटसन के रेशे की गुणवत्ता सड़न के जैव रासायनिक प्रक्रिया पर निर्भर करती है। पटसन एवं मेस्ता रेशे की गुणवत्ता फसल के उचित सड़न प्रक्रिया जो कि अच्छे साफ सुथरे, मीठे पानी में हो, पर निर्भर करता है। पटसन की सड़न अच्छी तरह होने से पटसन की आनुवांशिक गुणवत्ता भी प्रदर्शित होती है। पारंपरिक सड़न प्रक्रिया से निम्न गुणवत्ता वाले रेशे की प्राप्ति होती है चाहे फसल कितनी भी अच्छी क्यों ना हो इसका बाज़ार में भी मूल्य कम मिलता है।

सड़ने की प्रक्रिया सबसे अच्छी तरह धीरे धीरे बहते हुए पानी में होती है जो पटसन कृषित प्रदेशों में बहुत कम उपलब्ध होता है। नब्बे प्रतिशत से अधिक पटसन कृषक अपने फसल को पारंपरिक विधि से ठहरे हुए पानी में, कीचड़ और केले के तने से ढँकने वाली सामग्री का उपयोग कर पटसन को सड़ाते हैं। प्राकृतिक रूप से पाये जाने वाले सड़न तालाब में अगर लगातार पटसन सड़ाते हैं तो बाद वाला रेशा खराब गुणवत्ता का हो जाता है। इसलिए ऐसे तालाबों को भी स्वच्छ जल से पुन: भरना चाहिए लेकिन अगर ऐसा संभव न हो तो केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (क्रिजैफ) निर्मित पाउडर आधारित सूक्ष्मजीवी मिश्रण का प्रयोग व्यवहार करने से न सिर्फ सड़न की अवधि 6 -7 दिनों तक कम हो जाती है बल्कि गुणवत्ता में भी 2-3 ग्रेड का सुधार होता है।

भा. कृ.अनु. प - क्रिजैफ ने पाउडर आधारित सूक्ष्मजीवी मिश्रण विकसित किया है जिसका व्यापारिक नामकरण "क्रिजैफ सोना" रखा गया है। इसमें बेसिलस वंशज के तीन पेक्टिनोलाईटिक जीवाणु रहते हैं जो की सड़न प्रक्रिया को तेज़ कर ठहरे हुये पानी से अच्छे गुणवत्ता वाले पटसन/मेस्ता रेशे का उत्पादन करते हैं।

इस विधि में सबसे पहले पटसन बंडलों को स्तरों में रख कर ('जाक' बनाना) इसके प्रत्येक स्तर पर इस मिश्रण पाउडर का छिड़काव किया जाता है। पाउडर का छिड़काव करते वक्त इस बात का ध्यान रखा जाता है कि पटसन के बंडल के निचले भाग में ज्यादा पाउडर हो और ऊपरी हिस्से में कम पाउडर का छिड़काव हो। 'जाक' तैयार होने पर इसके ऊपर सीमेंट की बोरी (बालू, कीचड़ अथवा मिट्टी भरा बस्ता) या फिर इसके ऊपर पॉलिथीन में पानी भर 'जाक' के ऊपर रखा जा सकता है ताकि पटसन के बंडल पानी

क्रिजैफ विकसित सूक्ष्मजीवी मिश्रण (क्रिजैफ सोना)

में पूरी तरह से डूब जाएँ। यदि किसानों के पास पुआल या जल-कुंभी मौजूद हो तो इसे भी 'जाक' के ऊपर रखा जा सकता है। एक हैक्टेयर क्षेत्रफल वाले पटसन/मेस्ता फसल को सड़ाने के लिए लगभग 30 कि॰ग्रा॰ पाउडर की आवश्यकता होती है। इस विधि से हम उसी पानी में 2-3 बार सड़न प्रक्रिया कर सकते हैं जो कि पारंपरिक विधि में संभव नहीं (मिट्टी व कीचड़ व्यवहार के कारण) हो पाता है। उसी ठहरे हुए पानी में दुबारा या तिबारा सड़न के लिए पाउडर मिश्रण कि आवश्यकता पहले सड़न कि तुलना में आधी (यानि कि प्रति हैक्टेयर मात्र 15 कि॰ग्रा॰ पाउडर) हो जाती है। इस विधि का उपयोग कर कृषक उच्च गुणवत्ता वाला सुनहरा, चमकीला व मजबूत रेशे की प्राप्ति कर सकते हैं।

आर्थिक लाभ

- सड़न प्रक्रिया की अवधि शीघ्र होने के कारण उत्पादकता में 8 -10 % की वृद्धि।

पटसन बंडल के ऊपर सूक्ष्मजीवी पाउडर का छिड़काव

स्थिर पानी में सूक्ष्मजीवी पाउडर द्वारा पटसन का सड़न

- पारंपरिक विधि कि तुलना में कृषक एक हैक्टेयर क्षेत्रफल के लिए सिर्फ 1375 -1650 रुपये अधिक खर्च करके 12,000-15,000 रुपये तक की आमदनी प्राप्त कर सकतें हैं।
- इस मिश्रण की सेल्फ अवधि छह महीने होने के कारण कृषक अपनी सुविधानुसार इसे उपयोग कर सकते है।
- उच्च गुणवत्ता वाला सुनहरा, चमकीला व मजबूत रेशे कि प्राप्ति जिससे कृषकों को प्रति क्विंटल 400 - 500 रूपये की अतिरिक्त आमदनी होती है।
- चूँकि इस विधि में एक समान सड़न होता है इसलिए रेशा निष्कर्षण प्रक्रिया में प्रति हैक्टेयर 7- 8 कम श्रमिक लगते है।

तकनीकी लाभ

- सड़न प्रक्रिया की अवधि 6 -7 दिनों तक कम हो जाती है।
- पारंपरिक विधि द्वारा सड़ित रेशे कि तुलना में 2-3 ग्रेड का सुधार।
- एक ही पानी का उपयोग 2-3 बार सड़न प्रक्रिया के लिए कर सकते हैं और इस तरह से जल व्यवहार क्षमता को तीन गुणा बढ़ा सकते हैं।
- इससे प्राप्त रेशे में जड़ की मात्रा नगण्य होती है।

पर्यावरणीय लाभ

- यह पाउडर (मिश्रण) पर्यावरणीय अनुकूल है तथा इसका जलीय वनस्पति एवं जीव –जन्तु (खासकर मछली) पर कोई प्रतिकूल असर नहीं होता है।
- चूँकि इस मिश्रण में कोई संक्रामक सूक्ष्मजीवियों का प्रयोग नहीं किया जाता है इसलिए इसका मानव तथा मवेशी के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल असर नहीं होता है।
- इस सड़न प्रक्रिया में जो गंध निकलता है वो पारंपरिक सड़न की तुलना में बहुत ही कम होता है।
- इस पूरे प्रक्रिया में पारंपरिक सड़न विधि की तुलना में बहुत ही कम "ग्रीन हाउस गैसों" का विसर्जन होता है।

अन्य लाभ

- इस पाउडर के प्रयोग के तरीके में कोई जटिलता नहीं है।
- यह सरल, सस्ता और कृषक के अनुकूल तकनीक है।
- इस तकनीक को सामान्यतः किसी भी क्षेत्रीय अवस्था में अपनाया जा सकता है।
- इस विधि से प्राप्त रेशे को मूल्य वर्धित सामग्रियों में प्रयोग करने से उत्पादों की ज्यादा कीमत मिलती है।

पटसन रेशा निर्मित विविध उत्पादों के निर्माण में उपयोगी गुणवत्ता वाले रेशे के लिए हमें इस पाउडर का प्रयोग अधिक से अधिक करना चाहिए तथा पटसन उद्योगों द्वारा इस प्रकार के चमकीले तथा मजबूत रेशों को आयात करने में जो खर्च आता है उसे काफी कम कर सकते हैं।

सूक्ष्मजीवी पाउडर द्वारा प्राप्त सुनहरा व चमकीला रेशा

जूट – आई केयर (Jute – ICARE) कार्यक्रम द्वारा इस नवाचार का एक संकलित अनुभव

इस नये तकनीक का प्रचार – प्रसार से पिछले 8 वर्षों में करीब 2000 से ज्यादा प्रक्षेत्र प्रदर्शन हो चुके है। इस कार्यक्रम में क्रिजैफ की पटसन की उन्नत तकनीकों का बड़े पैमाने पर प्रक्षेत्र प्रदर्शन किया जा रहा है। इनमे से "क्रिजैफ सोना" द्वारा उन्नत सड़न प्रक्रिया भी एक महत्वपूर्ण तकनीक है। विगत पाँच वर्षो (2015-20) में पश्चिम बंगाल, बिहार, असम, ओड़ीशा, मेघालय एवं आंध्र प्रदेश के विभिन्न पटसन एवं मेस्ता बाहुल्य क्षेत्रों के 72 प्रखंडों में करीब 1784 मेट्रिक टन "क्रिजैफ सोना" पाउडर का वितरण किया गया जिससे करीब 60 हज़ार हेक्टयेर क्षेत्रफल के पटसन पर प्रयोग किया जा सका और इससे करीब एक लाख तैंतीस हज़ार किसान लाभान्वित हुए हैं।

इस कार्यक्रम का मूल्यांकन जब एक बाहरी संस्था, राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद, भारत सरकार ने किया तो उन्होंने पाया कि 62.37 प्रतिशत किसानों ने "क्रिजैफ सोना" पाउडर तकनीक को अपनाया क्योंकि ये सड़न की अवधि को औसतन 20 दिनों (पारंपरिक विधि) की तुलना में 13.82 दिनों में करता है और अच्छी गुणवत्ता वाला रेशा देता है। किसानों ने इसको प्रयोग करने के बाद इसे सरल, लाभप्रद और अपने प्रचलित प्रणाली के साथ सामंजस्य बैठाने में काफी आसान बताया।

हमारे संस्थान ने इसके उत्पादन को बड़े पैमाने पर करने के लिये 2015 में ही इसका वाणिज्यीकरण कर दिया। अभी इसका उत्पादन पश्चिम बंगाल में दो तथा असम में एक कंपनी कर रही है। इसके प्रयोग से किसानों को तो आर्थिक लाभ हुआ साथ ही संस्थान को इससे रॉयल्टी भी मिल रही है।

कृषि आय दोगुनी करने के लिए स्वयं सहायता समूह के माध्यम से पटसन आधारित हस्तशिल्प की भूमिका

एम. एल. राय, षम्ना ए., एम. एस. बेहरा एवं एस. सतपथी
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि इस देश की रीढ़ है। यह इस देश के समाज और संस्कृति से व्यापक तौर पर जुड़ा हुआ है। भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि पर बहुत ज्यादा निर्भर करती है। देश के किसान न केवल लोगों को खाद्यान्न उपलब्ध करा रहे हैं बल्कि देश को आत्मनिर्भर भी बना दिया है| भारत में छोटे और सीमांत किसानों की अधिकता है। इन छोटे और सीमांत किसानों के पास खेती करने के लिए बहुत कम जमीन है। इसके अलावा कृषि संसाधन, श्रम, पूंजी, सूचना और बाजार जैसे अन्य संसाधनों तक उनकी पहुंच ठीक नहीं है। यह स्थिति छोटे और सीमांत किसानों के लिए गरीबी का कारण बनती है। भारतीय कृषि मौसम पर बहुत निर्भर है। मौसम में बदलाव के कारण लगातार मौसम की खराबियां, फसल की क्षति और फसल खराब होने का कारण बन रही हैं। यह घटना गरीब भारतीय किसानों की हालत को और खराब करती है। कृषि भूमि दिन-प्रतिदिन कम हो रही है और जनसंख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। देश के लोगों को खिलाने के लिए कृषि और किसानों पर भारी दबाव है। अगर देश के किसान कायम नहीं रहेंगे तो कृषि भी नहीं टिकेगी। देश में खाद्यान्न की भारी कमी होगी और देश की अर्थव्यवस्था स्वाभाविक रूप से ढह जाएगी। इसलिए किसान की आर्थिक हालत में सुधार की जरूरत है ताकि वे कायम रह सकें और खेती लाभकारी हो। अब यह प्रवृत्ति है कि किसान परिवारों के युवा सदस्य अपने पिता और दादा की तरह खेती नहीं करना चाहते हैं बल्कि वे अन्य व्यवसाय पसंद करते हैं। यह अच्छा संकेत नहीं है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों से भारी पलायन हो रहा है। यदि कृषि को करने वाला कोई नहीं होगा तो कृषि नष्ट हो जाएगी। अतः कृषि को व्यवसाय के रूप में लाभदायक बनाया जाना चाहिए। यदि कोई किसान अपने श्रम का मूल्य प्राप्त कर सकता है तो वह खुश होगा और अन्य साथी किसानों को खेती करने के लिए प्रेरित करेगा। इसलिए किसानों की आर्थिक स्थिति बढ़ाने के बारे में सोचने का समय आ गया है। कृषि से किसानों की आय सुनिश्चित करके उसे और बढाना है। जितनी अधिक कृषि से आय बढ़ेगी उतनी ही अधिक कृषि व्यवसाय में रुचि बढ़ेगी। यह हमारा नैतिक कर्तव्य और जिम्मेदारी है कि हम कृषि से आय बढ़ाने के लिए आवश्यक उपाय करें ताकि किसानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का उत्थान किया जा सके। सुनिश्चित और बढ़ी हुई आय के द्वारा किसान देश के अन्य साथी नागरिकों की तरह अपने परिवार के सदस्यों के साथ एक अच्छा जीवन जी सकते हैं। उनके बीच असंतोष की कोई बात नहीं होगी। देश के खाद्य प्रदाता बेहतर आय और आजीविका सुरक्षा के जरिए बेहतर जीवन जीयेंगे।

किसानों की आय दोगुना करने की अवधारणा का आगमन

28 फरवरी 2016 को उत्तर प्रदेश के बरेली में किसान रैली में किसानों की आय के बारे में बात करते समय भारत के माननीय प्रधानमंत्री, श्री नरेंद्र मोदी जी ने कहा कि 2022 तक किसानों की आय दोगुनी करना उनका सपना है जब देश अपनी आजादी के 75 साल पूरे कर रहा होगा। इसके बाद के वर्ष 2017 में, उन्होंने संकल्प से सिद्धि नामक एक राष्ट्रव्यापी अभियान शुरू किया जिसमें भारत छोड़ो आंदोलन की 75 वीं वर्षगांठ को बड़े पैमाने पर मनाया गया। इसमे किसानों की आय 2022 तक दोगुनी करना माननीय प्रधानमंत्री द्वारा देशवासियों को दिये गये लक्ष्यों में से एक था।

किसानों की आय दोगुना करने की रूपरेखा

2022 तक किसानों की आय दोगुनी करने के लिए सात सूत्रों को निम्न अनुसार कहा गया है-

1. **उत्पादन में वृद्धिः** पानी न केवल मानव के लिए बल्कि पौधों के लिए भी जीवन है। उत्पादन बढ़ाने के लिए जल संरक्षण और सिंचाई परियोजनाओं पर जोर दिया जा रहा है। माननीय प्रधानमंत्री ने "प्रति बूंद अधिक फसल" का नारा दिया और उत्पादन बढ़ाने के लिए इस दिशा में काम शुरू किया गया।

2. **इनपुट का प्रभावी उपयोगः** फसल की उन्नत किस्मों की खेती को लोकप्रिय बनाया जा रहा है। मृदा स्वास्थ्य और मृदा उत्पादकता को बनाए रखने के लिए और मृदा में उर्वरकों के उपयुक्त अनुप्रयोग के लिए मृदा स्वास्थ्य कार्ड तैयार किए जा रहे हैं और किसानों को वितरित किए जा रहे हैं। मिट्टी में नत्रजन के प्रभावी उपयोग के लिए नीम लेपित यूरिया के उपयोग को प्रोत्साहित किया जा रहा है। कृषि मे टिकाऊपन के लिए जैविक खेती को महत्व दिया जा रहा है।

3. **कटाई के बाद के नुकसान को कम करनाः** कृषि उपज और उत्पादों के कटाई के बाद के नुकसान को कम करने के लिए देशव्यापी कोल्ड चेन प्रबंधन के माध्यम से उचित संरक्षण उपाय किए जा रहे हैं। कृषि उपज और उत्पादों को संरक्षित करने और उपभोक्ताओं तक पहुंचने से पहले इन चीजों का नुकसान कम करने के लिए गोदामों की स्थापना और अन्य भंडारण सुविधाओं को प्रोत्साहित किया जा रहा है। किसान संपदा योजना भी शुरू की गई है।

4. **गुणवत्ता में सुधारः** खाद्य फसलों की पोषक तत्वों से भरपूर किस्मों को विकसित और लोकप्रिय बनाया जा रहा है। वातित पेय में पोषक तत्वों से भरपूर फलों के रस का उपयोग इन उत्पादों की गुणवत्ता में उन्नयन कर सकता है जैसा कि माननीय प्रधानमंत्री जी के दिशा निर्देशन में कोकाकोला द्वारा किया गया। गुणवत्ता वाले कृषि उत्पाद उनकी मांग में वृद्धि करते हैं और अपने उत्पादकों की आय में वृद्धि कर सकते हैं।

5. **न्यूनतम विपणन मार्जिनः** उपभोक्ता की कीमत में उत्पादक की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए कई पहल की जा रही हैं। देश में 585 नियमित होलसेल बाजारों में एक ऑनलाइन इलेक्ट्रॉनिक मार्केटिंग प्लेटफॉर्म

बनाया गया है। सरकार द्वारा कृषि विपणन में बिचौलियों के प्रभुत्व को नियंत्रित करने और कृषि वस्तुओं के विक्रय मूल्य में कृषि उत्पाद के मूल उत्पादकों की हिस्सेदारी बढ़ाने के लिए प्रभावी उपाय किए जा रहे हैं। उत्पादकों से लेकर उपभोक्ताओं तक सीधी मार्केटिंग के लिए कदम उठाए जा रहे हैं। किसानों की सौदेबाजी की शक्ति बढ़ाने के लिए किसान-निर्माता कंपनियां (एफपीओ) तैयार की जा रही हैं।

6. **कृषि में जोखिम को कम करना:** किसानों को कृषि बीमा की छतरी के नीचे लाने के लिए प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना शुरू की गई है ताकि वे प्राकृतिक आपदा और मौसम की दुर्दशा के कारण अपनी बीमित फसलों की क्षति का मुआवजा प्राप्त कर सकें। यह निश्चित रूप से कृषि में जोखिम को कम कर रहा है। इसके अलावा प्रतिरोधी और सहिष्णु फसल की किस्मों और जानवरों की नस्लों को विकसित किया जा रहा है और खराब मौसम की स्थिति के कारण फसल की क्षति को कम करने के लिए लोकप्रिय बनाया जा रहा है।

7. **संबद्ध कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देना:** संबद्ध कृषि गतिविधियाँ जैसे डेयरी, मुर्गी पालन, बकरी पालन, मछली पालन, मधुमक्खी पालन, मशरूम की खेती, बागवानी और एकीकृत खेती को किसानों के बीच बढ़ावा दिया जा रहा है ताकि फसल की खेती पर उनकी निर्भरता कम हो सके जो बहुत ही मौसम आधारित और जोखिम भरा है। खेत की फलियों और परती भूमि में फल और ईंधन के वृक्षारोपण व सौर सेल स्थापन के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

पटसन किसानों की आय दोगुनी करने के लिए सिफारिश और कार्यनीति

सिफारिशें

- पटसन की खेती के लिए नई तकनीकों को बढ़ावा देने के लिए पटसन फार्मिंग डेटाबेस का विकास, मूल्य श्रृंखला की स्ट्रीमिंग और प्रभावी विपणन
- पाँच साल के समय के पैमाने में उन्नत किस्मों के साथ बीज प्रतिस्थापन के लिए समय में नई पटसन किस्मों के बीज के उत्पादन और वितरण के लिए ढांचागत विकास
- उत्पादकता बढ़ाने और गुणवत्ता में सुधार के लिए क्रिजैफ द्वारा विकसित बेहतर मशीनरी और प्रौद्योगिकियों को बढ़ावा देना
- पटसन की खेती में प्रतिफल को और बढ़ाने के लिए यथार्थवादी न्यूनतम समर्थन मूल्य का निर्धारण
- पटसन के बढ़ते क्षेत्रों में पटसन सड़न के लिए सुविधाएं और संसाधन बनाना
- किसानों द्वारा संकट की बिक्री से बचने के लिए सरकारी खरीद प्रणाली को व्यवस्थित करना
- बेहतर पटसन उत्पादन के लिए लघु और सीमांत किसानों द्वारा क्रिजैफ व्यावसायीकृत उपकरणों और प्रौद्योगिकियों को लेने के लिए रणनीतियाँ
- पटसन रेशा से बने विविध कुटीर उद्योगों से आय बढ़ाने के लिए सजावटी और हाउस होल्ड सामान बने।

कार्यनीति

- किसानों द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों और उपकरणों पर प्रशिक्षण, क्षमता निर्माण और बड़े पैमाने पर प्रदर्शन।
- नई किस्मों के बीजों को प्रति वर्ष 10-15% बदला जाना।
- राज्य कृषि विभाग के जिलेवार संयुक्त कार्यबल का गठन
- प्रभावी योजना कार्यान्वयन के लिए संसाधनों को सुनिश्चित करने के लिए नाबार्ड-केवीके-एटीएमए
- समय पर इनपुट उपलब्धता सुनिश्चित करना, विशेष रूप से बीज, सीड ड्रिल और नेल वीडर
- पटसन किसानों की आय सुनिश्चित करने एवं सही तकनीकों को किसानों के पास पहुंचाने के लिए बड़े पैमाने पर (2000 हेक्टयर) क्षेत्र प्रदर्शन के साथ – साथ पटसन मिलों द्वारा उत्पादों का खरीद के लिए यथा संभव व्यवस्था करना
- प्रौद्योगिकी और बाजार विनियमन के प्रभावी प्रचार के लिए व्यावहारिक रणनीति को लागू करने के लिए विभाग-एनजेबी-केवीके-जेसीआई लिंकेज को मजबूत करना

किसानों की आय दोगुना करने की दिशा में स्वयं सहायता समूह की भूमिका

किसानों की आय को दोगुना करने के लिए संबद्ध कृषि गतिविधियों को बढ़ावा देने की दिशा में स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। स्वयं सहायता समूह ग्रामीण का एक छोटा, आर्थिक, निकट समूह हैं जो स्वेच्छा से समूह के निर्णय के अनुसार अपने सदस्यों को उधार देने के लिए एक आम निधि में योगदान करने के लिए तैयार हैं। यह हाल के वर्षों में लोगों के साथ काम करने के लोकप्रिय तरीके के रूप में उभरा है। स्वयं सहायता समूह कुछ आय उद्भव करने वाली गतिविधियों जैसे कृषि उपज के मूल्य संवर्धन उनके उत्पादन और विपणन को ले सकते हैं। इन गतिविधियों को शुरू करने के लिए आवश्यक बजट को कई सूक्ष्म-वित्त योजनाओं के माध्यम से बैंकों और नाबार्ड से ऋण प्राप्त करके पूरा किया जा सकता है। स्वयं सहायता समूहों के सदस्य जिला स्तर की सरकारी एजेंसियों और संस्थानों से प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते हैं।

स्वयं सहायता समूह महिला सशक्तीकरण का आधार स्तंभ हैं। ग्रामीण कृषि महिलाओं के योगदान को अक्सर उपेक्षित किया जाता है लेकिन उन्होंने बुवाई से लेकर कटाई तक हर एक खेती के मामले में सक्रिय रूप से भाग लिया होता हैं। पशुपालन में भी कृषि महिलाओं की अहम भूमिका है। कई भूमिकाओं के बावजूद पारिवारिक संसाधनों और निर्णय लेने पर महिलाओं का नियंत्रण बहुत सीमित और नगण्य है। खेती में महिलाओं की सहभागिता को देखते हुए महिला स्वयं सहायता समूहों के गठन ने महिला सशक्तीकरण के लिए एक नया अवसर पैदा किया है। इन समूहों द्वारा सामूहिक रूप से एक साथ काम करने के लिए सक्षम करके कृषि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई गई है। सशक्तिकरण जागरूकता, क्षमता, अधिक भागीदारी और अधिक निर्णय लेने की शक्ति बनाने की एक प्रक्रिया है। ज्ञान, शक्ति और अनुभव प्राप्त करने के माध्यम

से सशक्तिकरण की प्रक्रिया महिलाओं की जन्मजात क्षमता को मजबूत करती है। स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं के सशक्तिकरण से न केवल व्यक्तिगत महिलाओं और महिलाओं के समूहों को बल्कि पूरे परिवार और समुदाय को भी लाभ मिलेगा। स्वयं सहायता समूह अपने सदस्यों की आत्मनिर्भरता का निर्माण करता है।

स्वयं सहायता समूह के माध्यम से पटसन आधारित हस्तशिल्प द्वारा आय वृद्धि

महिला स्वयं सहायता समूहों का गठन किसान परिवारों की महिलाओं विशेषकर पटसन उगाने वाले कृषक परिवारों की महिला सदस्यों को लेने के लिए किया जा सकता है। समूह विविध पटसन आधारित हस्तशिल्प जैसे खिलौने, गहने, मॉडल, सजावटी रस्सी, आसन, विभिन्न प्रकार के बैग, फाइलें, घर सजाने का सामान, जूते, शो-पीस आदि बना सकती है। । इससे इन किसान परिवारों को अतिरिक्त आमदनी होगी। प्लास्टिक उन्मूलन अभियान के मद्देनजर पटसन उत्पादों विशेषकर पटसन बैग और खरीदारी सामग्री की मांग कई गुना बढ़ जाने की संभावना है। पटसन हस्तकला आधारित स्वयं सहायता समूह इस अवसर को समझ सकते हैं। इसके लिए उचित प्रशिक्षण और वित्तपोषण की आवश्यकता है। सदस्यों को जिला स्तर के कौशल विकास एजेंसियों या पटसन से सम्बंधित संस्थानों में प्रशिक्षित किया जा सकता है। समूह को सूक्ष्म वित्त योजनाओं के माध्यम से नाबार्ड और अन्य राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा वित्तपोषित किया जा सकता है। इस प्रकार का उपक्रम न केवल किसान महिलाओं को सशक्त बनाता है बल्कि इन पटसन हस्तशिल्पों के विपणन के माध्यम से उनकी पारिवारिक आय में वृद्धि करता है।

आईसीएआर-क्रिजैफ द्वारा की गई पहल

कृषक महिलाओं को सशक्त बनाने और उनके माध्यम से कृषि आय बढ़ाने के लिए आईसीएआर- क्रिजैफ द्वारा इस दिशा में किसान महिलाओं के बीच उद्यमशीलता की गतिविधियों को विकसित करने के लिए विभिन्न पहल की गई जैसे कि पटसन के बैग और पटसन के गहने बनाने पर किसान महिलाओं के कौशल विकास का उपयोग करना, पटसन बैग और अन्य हस्तकला की तैयारी के लिए महिला स्वयं सहायता समूहों को प्रशिक्षण देना । संस्थान के उद्यमिता विकास कार्यक्रम के तहत प्रशिक्षुओं के एक समूह द्वारा "पटसन रानी" नाम के एक स्वयं सहायता समूह का गठन किया गया है। समूह के सदस्यों ने सफलता पूर्वक प्रशिक्षण प्रदान करने और अपनी सफलता की कहानी साझा करने के माध्यम से उद्यमिता विकास में अन्य किसान महिलाओं को समझाने और प्रेरित करने में मुख्य भूमिका निभाई है। पटसन रानी स्वयं सहायता समूह के सदस्यों ने पश्चिम बंगाल के पटसन उत्पादक क्षेत्र में कई प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए मुख्य प्रशिक्षक के रूप में काम किया। इस समूह ने नियमित रूप से सरकारी कार्यालयों में उपयोग के लिए पटसन बैग बनाने, बैठकों और प्रशिक्षणों में आपूर्ति के माध्यम से धन अर्जित किया है।

आईसीएआर- क्रिजैफ ने बैरकपुर के नीलगंज में नए पंजीकृत "सबका अपना किसान निर्माता कंपनी (एफपीओ)" के तहत कृषक महिलाओं को जुटाने में गहरी दिलचस्पी ली है। एफपीओ के तहत पंजीकृत किसान महिलाओं को पटसन बैग बनाने का प्रशिक्षण दिया गया है। समय-समय पर गांवों की महिला समूहों को उनके स्वयं सहायता समूहों को अन्य संबंधित संस्थानों के साथ जोड़ बनाए रखने के तरीकों के बारे में जागरूक किया गया।

संस्थान में पटसन बैग बनाने में कौशल वृद्धि कार्यक्रम में भाग लेने वाली महिलाएँ

पटसन हस्तशिल्प और कुछ चुनौतियां

पटसन हस्तशिल्प के उचित विपणन के समक्ष कुछ चुनौतियां हैं। सबसे पहले पटसन आधारित हस्तशिल्प खासकर पटसन बैग की माँग को बढ़ाना होगा। ग्राहकों के बीच पटसन के थैलों का और अधिक सामाजिक एवं पर्यावरणीय कारणों के चलते पटसन से बनी वस्तुओं का उपयोग करने के लिए उनके बीच जागरूकता फैलाना आवश्यक है | इन स्वयं सहायता समूहों और संभावित खरीदारों के बीच संबंध बनाने की जरूरत है। सभी सरकारी, अर्ध-सरकारी, निजी संस्थान, कार्यालय बैठकों, प्रशिक्षण, सेमिनार, कार्यशालाओं, सम्मेलनों आदि में पटसन बैग, फ़ाइलों और फ़ोल्डरों का उपयोग करना अनिवार्य बना सकते हैं। इससे बाजार में अधिक गुणवत्तावाली पटसन रेशों और पटसन उत्पादों की भारी मांग पैदा होगी। इस प्रकार अधिक गुणवत्ता वाले पटसन रेशे का उत्पादन करने वाले किसानों और पटसन उत्पादों के साथ काम कर रहे स्वयं सहायता समूह का विकास होगा। इस रूप से पटसन उगाने और पटसन उत्पाद तैयार करने वाले किसान परिवारों की आय भी बढ़ेगी।

फ्लैक्सः- भारत की एक उभरती हुई उच्च गुणवत्तायुक्त संभावित रेशा फसल तथा इसकी सस्य पद्धतियाँ

एस. के. पाण्डेय, दीपनारायण साहा, जीवन मित्र एवं विकास मंगल
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

परिचय

फ्लैक्स (*लाइनम यूसिटेटिसिमम*) लिनिएसी कुल के अंतर्गत आने वाली एक प्रमुख फसल है जिसकी किस्में दो प्रकार की होती हैं: एक तेल के लिए उगाई जाने वाली जिसे आमतौर पर अलसी के रूप में जाना जाता है और दूसरा रेशा के लिए जिसे फ्लैक्स के नाम से जाना जाता है। इन दोनो प्रकारों के किस्मों का मूल रूप से अलग-अलग अनुप्रयोग हैं। एक आदर्श रेशा किस्म (फ्लैक्स) तथा आदर्श बीज किस्म (अलसी) के निर्धारक मानक लगभग विपरीत हैं। जहां रेशा किस्में बिना किसी पार्श्व शाखाओं की तेजी से वृद्धि करने वाली ऊंचे कद तथा विलम्ब पुष्पण युक्त होनी चाहिए वहीं बीज वाली किस्में अधिक शाखाओं युक्त, छोटे कद तथा अत्यधिक पुष्पण एवं फलन वाली उपयुक्त होती है। फ्लैक्स दुनिया की सबसे पुरानी रेशा फसलों में से एक हैं। इसका उपयोग प्रमुखता से उच्च गुणवत्ता वाले धागे बनाने के लिए किया जाता है जिससे उच्च कोटि के वस्त्र निर्मित किए जाते हैं। फ्लैक्स से निर्मित धागे कपास की तुलना मे काफी मजबूत तथा कम लोचदार होता है। उच्च ग्रेड वाले रेशे का उपयोग कपड़े जैसे कि मास्क, फीता और चादर इत्यादि बनाने के लिए उपयोग किया जाता है जबकि निम्न ग्रेड वाले रेशे का उपयोग सुतली तथा रस्सी बनाने के लिए किया जाता है। फ्लैक्स रेशा उच्च गुणवत्ता वाले कागज उद्योग जैसे मुद्रण नोट, सिगरेट, चाय बैग एवं रोलिंग पेपर बनाने के लिए भी उपयोग होता है। भारतवर्ष मे फ्लैक्स की खेती प्रायः तिलहन फसल के रूप मे की जाती है और वस्त्र हेतु आवश्यक रेशे की मांग को यूरोपीय देशों से आयात के द्वारा पूरी की जाती है जिस पर प्रतिवर्ष लगभग 1000-1200 करोड़ रूपये खर्च आता है। इसका प्रमुख कारण रेशा उत्पादन हेतु उपयुक्त प्रजातियों का अभाव, उन्नत शस्य विधियाँ, कटाई उपरांत तकनीकों का अभाव तथा व्यवस्थित बाजार की कमी आदि है।

वानस्पतिक विवरण

फ्लैक्स पतले तने (0.15-0.35 सेमी) वाला एक वार्षिक पौधा है जिसकी औसत ऊंचाई लगभग 1.2 मीटर तक होती है जो कि मृदा के प्रकार तथा फसल बढ़वार के मौसम की लंबाई पर निर्भर करता है। पत्तियां चमकदार हरी, पतली लैंसोलेट, 20-40 मिमी लंबी और 3 मिमी चौड़ी होती हैं। इसके फूल का रंग सफ़ेद अथवा नीला, 15-25 मिमी व्यास तथा पाँच पंखुड़ियों वाला होता है। फल गोल तथा सूखा कैप्सूल 5-9 मिमी व्यास वाला होता है जिसमें कई चमकदार भूरे रंग के बीज होते हैं जो कि सेब के बीज के आकार के 4-7 मिमी लंबे होते हैं।

फ्लैक्स जननद्रव्य तथा इलाइट किस्मे

किसी भी कृषि फसल के आनुवांशिक सुधार के लिए विविध आनुवांशिक संसाधनों का पता लगाके उनका उपयोग करना बहुत जरूरी है। इस प्रकार जननद्रव्य संसाधन, उनके लक्षण वर्णन, कोर और मिनी कोर इन सभी का सुदृढ़ीकरण करना प्रमुख कृषि फसलों में आनुवांशिक सुधार कार्यक्रमों का एक आधार है। फ्लैक्स जननद्रव्य का अलसी और रेशा दोनों के रूप मे उपयोग करने के लिए भारत और दुनिया भर में कई जीन बैंकों में इसे बनाए रखा जा रहा है। जहां तक वैश्विक जीन बैंकों में फ्लैक्स संग्रह की बात है कुछ रिपोर्टों और जीन बैंक वेबसाइटों मे सटीक अनुमान उपलब्ध हैं। विश्व जीन बैंकों में 40000 से अधिक फ्लैक्स संग्रह शामिल हैं जिनमें 54 लाइनम प्रजातियां, अलसी और रेशा दोनों प्रकार शामिल हैं। अंतर्राष्ट्रीय फ्लैक्स डेटाबेस जो कि चेक गणराज्य द्वारा अनुरक्षित किया जाता है उसके अनुसार, 11141 फ्लैक्स और अलसी का परिग्रहण 15 अलग-अलग देशों से सहयोग किया गया है, उसमे भी ज्यादातर यूरोप से है।

फ्लैक्स संग्रह के लिए वागाइनिंगइन विश्वविद्यालय, नीदरलैंड्स के सेंटर फॉर जेनेटिक रिसोर्सेस (सीजीएन) में 947 फ्लैक्स एक्सेस हैं, जिनमें 490 फाइबर प्रकार शामिल हैं। यूनाइटेड स्टेट्स नेशनल प्लांट जर्मप्लाज्म सिस्टम डेटाबेस में 3004 फ्लैक्स एक्सेस मौजूद हैं, जिनमें से 2817 लाइनम के हैं। कनाडा के आनुवांशिक संसाधन सूचना नेटवर्क में लगभग 3378 फ्लैक्स जननद्रव्य एक्सेस शामिल है । इस वैश्विक जननद्रव्य परिग्रहण मे से, 407 एक मुख्य संग्रह का निर्माण करते हैं जिसमें से 89 रेशा प्रकार के हैं। चीनी फ्लैक्स जननद्रव्य संग्रह में भी लगभग 2000 फ्लैक्स जीनोटाइप है जिसमे से अधिकतर रेशा प्रकार के है। राष्ट्रीय स्तर पर, आईसीएआर-एनबीपीजीआर में लगभग मध्यम अवधि और अल्पकालिक भंडारण दोनों में 3000 फ्लैक्स एक्सेस हैं, उसमे से ज्यादातर अलसी प्रकार के है । भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ में कई प्रकार के इलाइट यूरोपीय प्रकार, उत्परिवर्ती और क्रॉस संग्रह के अलावा, 400 से अधिक रेशा प्रकार के फ्लैक्स जननद्रव्य का सक्रिय संग्रह बनाए रखा गया है।

फ्लैक्स की रेशे वाली किस्मों के बारे मे एक विस्तृत जानकारी अलग-अलग जगह बिखरी हुई है और एक संगठित दस्तावेज की कमी है। हालाँकि वैश्विक कोर संग्रह से लगभग 44 इलाइट किस्म सूचित की गयी है। इनमे से अधिकांश किस्में नीदरलैंड, फ्रांस, हंगरी, रूस और संयुक्त राज्य अमेरिका से हैं। फ्लैक्स रेशे पर जो प्रजनन प्रयास किए जाते है उनका मुख्य उदेश्य लंबे रेशा प्रकारों का चयन, तने की कठोरता, रेशा सामग्री और रोग के प्रति प्रतिरोध रहता है |

ग्लोबल इलाइट फ्लैक्स की कुछ किस्में जैसे एरियन, वाइकिंग, मरीना, इवेलिन, वियोला, फनी (फ्रांस में विकसित), मर्लिन, लौरा, रेजिना, वेरा और बेलिंका (नीदरलैंड में विकसित); विभिन्न लिरल, स्टॉर्मोंट और नॉरफ़ॉक (यूनाइटेड किंगडम से विकसित); स्वेटोच, एलेक्सिम, लेनोक, प्रोग्रैस (रूस से); गिज़ा 2 और 4 (मिस्र से); मिनर्वा (पोलैंड); मिलेनियम (हंगरी); कैसकेड (संयुक्त राज्य अमेरिका) और हीया (चीन से) है । भारत की फ्लैक्स की पहली उच्च उपज देने वाली रेशा किस्म जेआरएफ-2 (टियारा) को भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ द्वारा 2015 में विकसित और जारी

किया गया है (चित्र 1)। जेआरएफ-2 को एफटी -889 × एफटी -895 संकर की संतति से चयन करके विकसित गया है जो उच्च गुणवत्ता के साथ बेहतर रेशा उपज देता है। जेआरएफ-2 के पौधे की ऊंचाई 105-110 सेमी तथा इसका फूल सफेद होता है। जेआरएफ-2 शीघ्र परिपक्व होने वाली किस्म है और रेशे के लिए इसे 100-110 दिनों के भीतर और बीज के लिए 135-150 दिन के भीतर काटा जा सकता है। यह उच्च रेशा उपज (औसत 12.9 कु./हे.) के साथ-साथ उच्च रेशा मजबूती (25.5 ग्राम/टेक्स) और विल्ट रोग के प्रति सहिष्णु है। भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ में आने वाले कुछ वर्षों में विभिन्न क़िस्मों के विकास के लिए कई अन्य प्रजनन सामग्री का मूल्यांकन भी किया जा रहा है।

फ़्लेक्स किस्म (जेआरएफ 2)

फ़्लेक्स रेशा

फ्लैक्स रेशा पर उन्नत शोध

फ्लैक्स आनुवांशिकी और जीनोमिक्स

फ्लैक्स सबसे प्राचीन पौधों में से एक है और कई दशकों के बाद इसे अपनाया गया था। इसलिए यह पहले जीवविज्ञानी या आनुवंशिकीविद् का पसंदीदा विकल्प भी था। सन 1942 में फ्लैक्स में जो सबसे पहले ज्ञात महत्वपूर्ण आनुवांशिक निष्कर्षों में से एक, जब हेरोल्ड हेनरी फ्लोर ने पहली बार "जीन-फार-जीन परिकल्पना" को एक कवक *मेलमस्पोरा लीनी* का उपयोग करते हुए दिया था। यह फ्लैक्स मे एक कवक जनित रोग है जो कि रस्ट के लिए जिम्मेदार है। इस परिकल्पना के अनुसार मेजबान में प्रत्येक प्रतिरोध (आर) जीन के लिए रोगजनक में विपरीत एक संबन्धित एविरुलेंट (आर) जीन होता है। इसके बाद फ्लैक्स पर आनुवांशिक और जीनोमिक्स अनुसंधान के संदर्भ मे काफी काम हुआ है। विशिष्ट तापमान या उर्वरक के तहत केन्द्रीय डीएनए सामग्री में तेजी से बदलाव के कारण फ्लैक्स मे ही जीनोम प्लास्टिसिटी की घटना खोजी गई थी। फ़्लो साइटॉमेट्री के माध्यम से फ्लैक्स में जीनोम का आकार 373 एमबी अनुमानित किया गया जिसमें अगुणित गुणसूत्र संख्या $n = 15$ थी।

फ्लैक्स के प्रारूप जीनोम अनुक्रम को एक लोकप्रिय कनाडाई अलसी किस्म सीडीसी बेथ्यून में सम्पूर्ण जीनोम शॉटगन असेंबली का उपयोग करके 2012 में प्रकाशित किया गया था। कंटिग्स के संदर्भ में फ्लैक्स जीनोम अनुक्रम 302 एमबी बिना पुनरावृत्ति जीनोमिक क्षेत्र, 81% जीनोम को कवर करता है। कुल प्रोटीन कोडिंग 43384 जीन्स का अनुमान लगाया गया था।

जीनोम अनुक्रमों के अलावा, अभिव्यक्त होने वाले जीन या ट्रांसक्रिप्शनल स्तर के अनुक्रमों की कई जानकारी भी फ्लैक्स में उपलब्ध हैं। फ्लैक्स के तने के शीर्ष भाग और बेसल क्षेत्रों के ट्रांसक्रिप्टोम अनुक्रमों की तुलना फ्लोएम रेशे से संबन्धित विशिष्ट जीन की पहचान करने के लिए की गई है। इसी तरह एक व्यापक अध्ययन में कोशिकीय स्तर पर फ्लैक्स रेशे के विभिन्न विकास चरणों का विश्लेषण भी किया गया और रेशे की लंबाई बढ़ाने के लिए ट्रांसक्रिप्शनल अनुक्रम विकसित किए गए। लीगनन और लिग्निन सामग्री में अंतर करने वाले दो फ्लैक्स की किस्मों के बीच ट्रांसक्रिप्शनल अनुक्रम तुलना से पता चलता है कि वे एक दूसरे से नकारात्मक रूप से सहसंबद्ध हैं।

फ्लैक्स में जीनोम और ट्रांसक्रिपटोम अनुक्रमों के अलावा अन्य महत्वपूर्ण जीनोमिक संसाधनों में माइक्रो आरएनए अनुक्रमण, प्रोटीओम अनुक्रमण, जीनोटाइपिंग-बाय-सीक्वेंसिंग (जीबीएस) जीनोम रीसेक्वेंसिंग और टीलिंग डेटा शामिल हैं। फ्रांस के शोधकर्ताओं द्वारा फ्लैक्स में एक जीन कार्यात्मक विशेषता के लिए 4894 उत्परिवर्ती लाइनों की टिलिंग आबादी उत्पन्न की गई और फेनोटाइप किया गया। भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ द्वारा फ्लैक्स में एक ईएमएस म्यूटेंट आबादी भी विकसित की गई है जो कि नई किस्मों के विकास के लिए एक संसाधन का काम करेगी। भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ में जेआरएफ -2 किस्म के जीनोम में मिथाइलेशन हॉटस्पॉट्स की पहचान करने के लिए लिए जेआरएफ -2 किस्म मे सम्पूर्ण जीनोम मीथाइलोम विकसित करने का प्रयास चल रहा है।

आण्विक मार्कर और फ्लैक्स में मार्कर की सहायता से प्रजनन

फ्लैक्स में पर्याप्त संख्या में आण्विक मार्करों की कमी थी जब तक कि फ्लैक्स जीनोम अनुक्रम प्रकाशित नहीं हुआ था। भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ में

500 से अधिक नियामक जीन व्युत्पन्न एसएसआर मार्कर विकसित किए गए जो भारतीय और वैश्विक रेशा वाले फ्लैक्स जननद्रव्यों के बीच अंतर करने में सक्षम है। फ्लैक्स में आण्विक मार्करों के विकास के अलावा इन आण्विक मार्करों में से कई का उपयोग लिंकेज मैप्स बनाने मे किया गया है। फ्लैक्स में 100 से कम आरएपीडी और एएफएलपी मार्करों के संयोजन से पहली पीढ़ी का लिंकेज मैप बनाया गया। आण्विक मार्करों का उपयोग करते हुए कई क्यूटीएल मैप जैसे कि रोग प्रतिरोध, बीज तेल रचना और रेशा से संबंधित लक्षणों के लिए तैयार किए गए हैं। एसएनपी मार्करों ने जीनोम-वाइड एसोसिएशन स्टडीज (जीडब्ल्यूएएस) के माध्यम से फ्लैक्स जननद्रव्य, बीज के लक्षण, कोर संग्रह का गठन करने में और आनुवांशिक विविधता को समझने मे सुविधा प्रदान की।

फ्लैक्स ट्रांसजेनिक

एक सफल ट्रांसजेनिक पौधे के विकास के लिए एक कुशल उत्तक संवर्धन पुनर्जनन प्रणाली का होना जरूरी है। फ्लैक्स मे कैलस के पुनर्जनन के लिए सभी प्रकार के एक्सप्लांट जैसे कि प्रोटोप्लास्ट, हाइपोकोटाइल, कॉटीलेडन और पत्तियां सभी पूरी तरह से सफल रही है जिसकी वजह से ट्रांसजेनिक दृष्टिकोण के माध्यम से आनुवांशिक हेरफेर के लिए यह फ्लैक्स मे एक आकर्षक प्रणाली बन गई है। फ्लैक्स में प्रारंभिक आनुवांशिक अध्ययनों से पता चला है कि यह 1983 में एग्रोबैक्टीरियम परिवर्तन प्रणाली का उपयोग करके आनुवांशिक रूप से इंजीनियर होने वाला पहला पौधा है। हाल ही में *एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमीफेशियन्स* कल्चर का उपयोग करके फ्लोरल डिप परिवर्तन की एक सरल विधि अलसी और फाइबर दोनों के बिना खिले फूलों मे प्रयोग मे लायी गयी है। भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ में फ्लैक्स की जेआरएफ-2 किस्म में फ्लोरल डिप परिवर्तन विधि को हाल ही में मानकीकृत किया गया है।

फ्लैक्स जीनोम एडिटिंग

जीनोम एडिटिंग आज जैव प्रौद्योगिकीयों में से एक उन्नत रणनीति है जो जीनोम के सटीक और लक्षित संशोधन के माध्यम से पौधे के आनुवांशिक सुधार में क्रांति ला रहा है। क्रिस्पर/ केस 9 सबसे लोकप्रिय जीनोम एडिटिंग तंत्र है जो जीन नॉकआउट या टारगेट जीन की कार्यक्षमता को नुकसान पहुंचाता है। फ्लैक्स में क्रिस्पर/ केस 9 सिंगल स्ट्रण्ड ऑलिगोन्यूक्लियोटाइड्स (एसएस ओडीएन) के संयोजन को सौएर और उनके समूह द्वारा एक जीन, 5'-ईनॉल पायरुवेट सिकीमेट फॉसपेटेज सिनथेज (ईपीएसपीएस) कोडिंग जीन में नियोजित किया गया जो कि एक खरपतवार नाशी, ग्लाइफोसेट को नष्ट करता है। पूरी प्रक्रिया को फ्लैक्स कोशिकाओं के प्रोटोप्लास्ट में अंजाम दिया गया जो कि पौधों मे पुनर्जीवित होने के बाद अंततः ग्लाइफोसेट सहिष्णुता दिखा रहा था। यह भी अनुमान लगाया गया है कि फ्लैक्स ट्यूबुलिन और सेस ए जीन, जो कोशिका के विकास और कोशिका भित्ति के जैवसंश्लेषण मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जीनोम संपादन के लिए महत्वपूर्ण जीन हो सकता हैं। इसी प्रकार हीट शॉक फैक्टर (एचएसएफ) जीन जो कि उच्च तापमान तनाव अनुकूलन के लिए महत्वपूर्ण जीन हैं, भा.कृ.अनु.प.-क्रिजैफ के द्वारा फ्लैक्स में पता लगाया गया है, इसको भी फ्लैक्स के पौधों के अनुकूलन के लिए बदलाव किया जा सकता है। इस प्रकार जीनोम संपादन निकट भविष्य में फ्लैक्स में सटीक और विश्वसनीय विशेषता विकास के लिए उन्नत जैविक दृष्टिकोणों में से एक होगा।

रेशा फ्लैक्स की खेती

रेशा फसल वाली फ्लैक्स की खेती लगभग अलसी उत्पादन के ही समान है जो कि प्रमुख विचलनों के साथ नीचे विस्तार पूर्वक वर्णित हैं:

जलवायु संबंधी आवश्यकताएँ

फसल वृद्धि के दौरान उच्च आर्द्रता (60-65%) के साथ-साथ लगभग 156-200 मिमी वर्षा की आवश्यकता होती है। पुष्पण अवस्था के दौरान शुष्क एवं उच्च तापमान (लगभग 32.5 डिग्री सेल्सियस) रेशे की उपज को कम कर देता है। अतः वानस्पतिक वृद्धि के दौरान रेशा फसल को पर्याप्त नमी और ठंडे तापमान की आवश्यकता होती है लेकिन कटाई के बाद शुष्क मौसम फसल के सूखने तथा सड़ने की प्रक्रिया को गति प्रदान करता है। लगभग 76% सापेक्ष आर्द्रता के साथ-साथ कम तापमान (10-19 डिग्री सेल्सियस) पौधे की ऊँचाई को बढ़ावा देता है जो कि रेशा फसल के लिए सबसे वांछनीय गुण है। एक अच्छी जल निकास युक्त उच्च उर्वरा वाली मृदा जिसका पीएच मान थोड़ा अम्लीय (5.5 से 7.0 तक) हो इसकी खेती के लिए उपयुक्त होता हैं। रबी के मौसम में हिमाचल प्रदेश में कांगड़ा घाटी की कृषि-जलवायु परिस्थितियाँ इस फसल की खेती के लिए सर्वाधिक अनुकूल हैं।

बुवाई का समय

फ्लैक्स रबी मे उगाई जाने वाली फसल है। भारत के उत्तरी क्षेत्र में आमतौर पर इसकी बुवाई अक्टूबर के शुरुआत से प्रारम्भ की जाती है ताकि तापमान मे होने वाली कमी के कारण बीजों का अंकुरण प्रभावित ना हो सके। हालांकि देश के अन्य हिस्सों में अंकुरण हेतु उपयुक्त तापमान कि स्थिति मे इसकी बुवाई नवंबर के प्रथम सप्ताह तक भी की जा सकती है। प्रायः यह पाया गया है कि अगेती बुवाई की दशा मे आदर्श तापमान के कारण बीज का अंकुरण अच्छा होता है तथा फसल के बढ़वार के लिए लंबे समय तक ठंडा मौसम उच्च रेशा उत्पादन के लिए उपयुक्त होता है। संक्षेप में बुवाई का उचित समय अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के पहले सप्ताह तक है। इस अवधि में बोई जाने वाली फसल में आमतौर पर बेहतर रेशा गुणवत्ता के साथ उच्च रेशा उपज की प्राप्ति होती है।

बीज एवं बुवाई

रेशे वाली फ्लैक्स की फसल को उच्च बीज दर की आवश्यकता होती है जो 50 से 60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर तक होती है। एक पंक्ति में पौधों की 2-3 कतारें एक साथ बोई जाती हैं जिससे पौधों के बीच अन्तः पंक्ति प्रतियोगिता के कारण शाखायें नहीं निकलती और पौधे पतले होते हैं साथ ही हवा के कारण होने वाली क्षति से भी बचाव होता हैं। पंक्तियों के बीच 20 सेमी की दूरी वृद्धि के लिए उत्तम पायी गयी है। बीज कों 1.5 सेमी से अधिक गहराई पर नहीं बोना चाहिए क्योंकि इससे अंकुरण क्षमता प्रभावित होती है जो की रेशे कि पैदावार को प्रभावित करता है।

उन्नत प्रजातियाँ

भारत सरकार के फसल मानक, अधिसूचना एवं किस्म विमोचन हेतु केंद्रीय उप-समिति की सिफारिश पर रेशा फ्लैक्स की एक मात्र किस्म जेआरएफ -2 (टियारा) को वर्ष 2015 में व्यवसायिक खेती हेतु अधिसूचित किया गया है जिसका विस्तृत विवरण इस प्रकार है:

यह देश में रेशा उत्पादन के लिए विशेष रूप से विमोचित रेशे वाली फ्लैक्स की पहली किस्म है जिसे गजेट नोटिफिकेशन संख्या एस.ओ. 1228 (ई), दिनांक 07.05.2015 के मदज्ञम से अधिसूचित किया गया है। । इसे एफटी-889 × एफटी-895 के संकरण के पश्चात संतति चयन के द्वारा विकसित किया गया है । यह देश के समशीतोष्ण क्षेत्र विशेषकर हिमांचल प्रदेश, उत्तराखंड, मेघालय, सिक्किम, अरुणाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर तथा पश्चिम बंगाल में खेती के लिए उपयुक्त है। इस किस्म के कच्चे रेशे की औसत उपज क्षमता 12.94 कु./हे. है। यह किस्म फ्यूसेरियम विल्ट तथा अल्टरनेरिया लीनी के प्रति सहिष्णु है। असाधारण पौधे ऊंचाई के कारण इसके रेशे अत्यंत लंबे, चमकीले तथा मजबूत (25.55 ग्राम/टेक्स) होते हैं जो कि लाइन फाइबर के आवश्यक रेशा गुणवत्ता वाले लक्षण हैं।

पोषक तत्व प्रबंधन

भूमि की तैयारी के समय पोटाश तथा फास्फोरस की मात्रा क्रमशः 40 तथा 60 किग्रा/हे. की दर से प्रयोग करनी चाहिए। नत्रजन की 60 किग्रा/हे. की मात्रा को दो बराबर भागों मे विभाजित करके बुवाई के 21 तथा 45 दिनों की फसल अवधि पर निराई के उपरान्त पर्याप्त मृदा नमी की दशा मे छिड़काव करना चाहिए। अत्यधिक नत्रजन के प्रयोग से हवा के कारण फसल के गिरने की संभावना बनी रहती है। बुवाई से पहले एक सिंचाई तथा नत्रजन के प्रत्येक छिड़काव के समय सिंचाई करने से फसल की अच्छी वृद्धि होती है।

फसल की कटाई

उपयुक्त समय पर फ्लैक्स फसल की कटाई अत्यंत महत्वपूर्ण है। फसल की जल्दी कटाई से रेशे की महीनता मे वृद्धि किन्तु रेशा कमजोर होता है और साथ ही उपज मे भी कमी आती है। दूसरी ओर फसल की कटाई देर से करने पर अधिक लिग्निफिकेशन के कारण रेशे महीनता खो देते है जिससे रेशे की गुणवत्ता बुरी तरह प्रभावित होती है। रेशे की उपज तथा गुणवत्ता के बीच सबसे अच्छा सामंजस्य तब आता है जब पौधे के तने का रंग हल्का पीला होने लगता है लेकिन फलियाँ अपरिपक्व रहती हैं। इस अवस्था में तने के निचले दो तिहाई भाग की पत्तीयां झड़ गयी होती है। यह अवस्था प्रायः फसल बुवाई के 100 दिनों अथवा पहला फूल आने के लगभग एक महीने बाद आती है। फसल की कटाई सतह के करीब से हसिए की सहायता से अथवा जड़ सहित उखाड़ कर करनी चाहिए इससे रेशे की लंबाई मे वृद्धि आती है। तत्पश्चात पौधों को उपयुक्त आकार के बंडलों में बांध कर 4-5 दिनों तक खेत में ही छोड़ देने से शेष पत्तियाँ झड़ जाती है जिससे सड़न की प्रक्रिया आसान हो जाती है।

सकतीकरण (रेटिंग) तथा रेशा निष्कर्षण

फ्लैक्स के तने पतली छड़ी की तरह होते है और इसके कठोर आंतरिक कोर रेशों से घिरी होती है जिसका तात्पर्य यह है कि फ्लैक्स एक फ्लोएम रेशा फसल है। रेशे एक दूसरे के साथ एक प्रकार के गोंद जो कि पेक्टिन तथा लिग्निन के बने होते है, चिपके होते है। रेटिंग प्रक्रिया के दौरान गर्मी और आर्द्रता के कारण पानी मे मौजूद सूक्ष्म जीवाणु सक्रिय होकर गोंद का विरलीकरण कर देते हैं जिससे रेशे पृथक हो जाते हैं। फ्लैक्स सकतीकरण के दो तरीके हैं, ओस सकतीकरण तथा जल सकतीकरण।

ओस सकतीकरण (ड्यू रेटिंग)

एक लॉन या घास के मैदान में फ्लैक्स के पौधों को बारीकी से फैलाते हैं तथा यह सुनिश्चित करते हैं कि सभी जड़ें एक ही दिशा में रहें। सप्ताह में एक बार इसे पलट देते हैं ताकि सकतीकरण की क्रिया समान रूप से हो। यदि मौसम शुष्क है तो पौधों के उपर जल का छिडकाव उपयुक्त होता है। मौसम के अनुसार ओस सकतीकरण की प्रक्रिया लगभग 3 से 6 सप्ताह में सम्पन्न हो जाती है। ओस सकतीकरण में अपेक्षाकृत अधिक समय लगता है लेकिन यह प्रक्रिया अत्यंत आसान तथा जल सकतीकरण की तुलना में बेहद कम बदबूदार होती है। ओस सकतीकरण से प्राप्त रेशे गहरे भूरे अथवा सिल्वर रंग के प्राप्त होते हैं जबकि जल सकतीकरण से प्राप्त रेशे सुनहरे रंग के होते हैं।

जल सकतीकरण (वाटर रेटिंग)

इस विधि में फ्लैक्स के बंडलों को पानी के अंदर इस प्रकार दबाते है कि इनके उपर लगभग 10 से 15 से.मी. पानी बना रहे। इसे जलमग्न रखने के लिए ऊपर से वजन डालना आवश्यक होता है। सकतीकरण की प्रक्रिया आमतौर पर लगभग तीन से पांच दिनों में पूर्ण हो जाती है। जल सकतीकरण के पश्चात इन बंडलों को 5-7 दिनों के लिए धूप में सुखाया जाता है ताकि रेशा निष्कर्षण हेतु इसे तैयार किया जा सके।

रेशा निष्कर्षण

फ्लैक्स रेशे को डंठल से अलग करने की क्रिया को रेशा निष्कर्षण कहते है। इसके तीन चरण होते हैं: ब्रेकिंग, स्कैचिंग और हेकलिंग। फ्लैक्स डंठल को तोड़ने की प्रक्रिया को ब्रेकिंग, टूटे हुए डंठल कोर को अलग करने की क्रिया को स्कैचिंग तथा इस प्रकार से प्राप्त रेशों को हेकल्स (कंघे) के माध्यम से छोटे-छोटे तंतुओ को अलग करने की क्रिया को हेकलिंग कहते है |

ब्रेकिंग की प्रक्रिया प्रायः हाथ अथवा एक प्रकार के मशीन के द्वारा की जाती है। हाथ के माध्यम से हम फ्लैक्स के बंडलों को लकड़ी के ब्लेड से पीटकर नरम कर देते हैं जिससे रेशा एवं डंठल कोर अलग हो जाते हैं। स्कैचिंग की प्रक्रिया एक लकड़ी के ब्लेड अथवा स्कैचिंग मशीन से भी की जा सकती है। हेकलिंग की प्रक्रिया में विभिन्न आकार के कंघी अथवा हेकल्स के माध्यम से रेशा को लम्बवत खींचा जाता है जिससे फ्लैक्स रेशे सीधे हो जाते हैं तथा उनसे लगे हुए छोटे-छोटे तन्तु भी पृथक हो जाते हैं। इस प्रकार फ्लैक्स के रेशे धागे बनने हेतु तैयार हो जाते हैं।

स्वीकृतियां – क्रिजैफ प्रोजेक्ट (जेबी 10.3) और एसईआरबी प्रोजेक्ट संख्या (EEQ/2018/000274)

रोग मुक्त पटसन बीज उत्पादन

एस. के. सरकार
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

पटसन (*कोरकोरस ओलिटोरियस* और *सी. कैप्सुलेरिस*) भारत में विशेष रूप से पूर्वी और उत्तरपूर्वी राज्यों की महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फ्लोएम रेशे वाली फसल है। पटसन के अंदर जैव अपघटनीय, पर्यावरण के अनुकूल, अच्छी तरह से सामाजिक, आर्थिक रूप से पूर्वी क्षेत्रों का विकास, ये सभी गुण पाये जाते है | पश्चिम बंगाल 75 % क्षेत्र और कुल उत्पादन का 80 % हिस्सा कवर करता है लेकिन पटसन के बीज आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र और कर्नाटक में उत्पादित किए जाते है।

पटसन मे होने वाली महत्वपूर्ण बीमारियाँ –

तना सड़न

यह रोगजनक छोटे पौधों के गिरने, पौधों का झुलसना, पत्तियों का झुलसना, तने एवं जड़ का सड़ना, इन सभी का कारण बनता है | अंकुरण के बाद अंकुरित पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं जिन्हें अंकुरित ब्लाइट कहा जाता है। नमी ज्यादा होने पर भूरापन जड़ों तक पहुंच जाता है और अंकुर मर जाता है जिसे डंपिंग कहा जाता है। दो महीने में फसल के भूरे रंग के धब्बे पत्तियों पर भी दिखाई देते हैं जो धीरे-धीरे आकार में बढ़ते हैं और मोटे होते जाते हैं जो डंठल के माध्यम से तने में फैल जाते हैं जिसे तना सड़न कहा जाता है जो अंत में तने को पूरी तरह घेर लेते हैं। रोगज़नक़ जड़ों पर भी हमला कर सकता है जिससे जड़ के सड़ने और विल्ट के कारण पौधे की मृत्यु हो जाती है | बीज की फसल में यह फली पर धब्बे एवं फली और बीज दोनों पर पिकनिडिया और स्क्लेरोटिया स्पोर बनाता है। संक्रमित बीज छोटे, सिकुड़े हुए और हल्के रंग के होते हैं। संक्रमित पत्तियों पर होने वाले पिकनिडिया और पिकनिडिओस्पोर हवा या पानी द्वारा फैल जाते हैं और बीमारी फैलाते हैं। उच्च आर्द्रता, मिट्टी का तापमान, रेतीली दोमट मिट्टी (पीएच < 5.8) और पोटेशियम की कमी वाली मिट्टी इस रोग के अनुकूल घटक है।

एंथ्रेक्नोज

तने पर काले धब्बे जो गहरे परिगलन के बाद एक साथ सम्मिलित हो जाते है वे तने पर दरारों के रूप में दिखाई देते है जिसकी वजह से रेशे भी बाहर दिखाई देने लगते हैं। सफेद पटसन इस बीमारी से ज्यादातर प्रभावित होता है। हाल के वर्षों में एंथ्रेक्नोज से तोषा पटसन भी प्रभावित हुआ है। आमतौर पर यह असम और पश्चिम बंगाल में ज्यादा प्रचलित है। रोग मुख्य रूप से बीज जनित है लेकिन मिट्टी में पैदा होने वाला इनोकुलम संक्रमण के स्रोत के रूप में भी कार्य करता है। रोग के प्रसार के लिए उच्च वर्षा, उच्च सापेक्षिक आर्द्रता और 35 डिग्री सेल्सियस तापमान अनुकूल होते हैं। पौधों के बीच कम दूरी और अधिक खरपतवार की संख्या इस बीमारी की गंभीरता को बढ़ाती है |

बीज विवर्णता

बैरकपुर में लगभग 10-15% बीज विवर्णता देखा गयी। *मैक्रोफोमिना फेजोलिना*, *कोलेलेट्रिचम ग्लियोस्पोरियोइड्स*, *एस्परजिलस नाइगर*, *फुसैरियम*, *पेनिसिलियम*, *कर्वुलरिया लुनाटा* और *ड्रेचसेला* को बीज मायकोफ्लोरा के रूप में देखा गया जिसकी वजह से गुणात्मक मापदंडों जैसे अंकुरण, असामान्य अंकुर, पूर्व-उद्भव सड़न, अंकुरण के बाद सड़ांध और बीज के ताक़त सूचकांक मे कमी, ये सभी घटक बुवाई के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

बीज उत्पादन प्रौद्योगिकी

बुवाई का समय

बुवाई का समय वर्षा के स्वरूप के आधार पर अगस्त से मध्य सितंबर तक रहता है । मध्य सितंबर में बोई गई फसल भी अगस्त में बोई गई फसल के बराबर उच्च गुणवत्ता के साथ 8.8 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की पैदावार दे देती है। सितंबर में बोई गई फसल के कुछ फायदे होते है जैसे कि फसल अवधि में कमी इसके अलावा जो बारिश का मुख्य समय होता है उससे संबन्धित भी कुछ सस्य प्रक्रिया के काम कम हो जाते है |

उर्वरक

उर्वरक की मात्रा 60:30:30 या 60:40:40 मिट्टी की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। यदि बारिश के कारण सितंबर तक बुवाई में देरी होती है तो नत्रजन की मात्रा अलग अलग समय पर देने से पौधे की वृद्धि अधिक होती है | बार-बार होने वाली वर्षा के कारण खेत का संचालन कठिन हो जाता है और फसल खराब और कमजोर हो जाती है। ऐसे मामलों में जैसे ही बारिश बंद होती है, मिट्टी की मल्चिंग के साथ नत्रजन के उपयोग से एवं नेल वीडर का उपयोग करने से फसल की बढ़वार बेहतर होती है।

पौधों के बीच की दूरी

सामान्य बुवाई के समय अर्थात् जुलाई से मध्य अगस्त, 40 सेमी पंक्ति से पंक्ति, 10 सेमी पौधे से पौधे के बीच की दूरी रखनी चाहिए। इस दूरी को पौधों के घनत्व को कम करते समय भी बनाए रखा जा सकता है। हालाँकि देर से बोई गई स्थिति में, घटे हुए पौधे की क्षतिपूर्ति और बीज उपज के साथ वृद्धि करने के लिए अतिरिक्त पौधों की संख्या के साथ कम दूरी (25-30 सेमी × 5-7 सेमी) रखी जा सकती है।

खरपतवार प्रबंधन

पौधे के निकलने के 5 – 7 दिनो बाद नेल वीडर से या फिर 15 – 21 दिनो के बाद हाथों से खरपतवार को निकाल देना चाहिए। रेशा वाली फसलों में जिन खरपतवारनाशी रसायनों की सलाह दी जाती है उन्हे भी उपयोग में ले सकते है।

शीर्षकर्तन

अगेती बुवाई वाली फसल (जुलाई से मध्य अगस्त) में 50 दिनों के बाद पौधों के शीर्ष की कटाई कर देनी चाहिए और उसके बाद 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर नत्रजन का छिड़काव करना चाहिए।

जलनिकास

तोषा पटसन की अधिकांश किस्में जल भराव का सामना नहीं कर पाती हैं। बीज फसल के लिए चिकनी मिट्टी के साथ-साथ निचले इलाकों का चयन करने से बचना चाहिए। विशेष रूप से पश्चिम बंगाल में बीज की फसल में लगातार बारिश का होना एक सामान्य घटना है। फसल की बुवाई से पहले पानी की निकासी बहुत जरूरी है। खराब जल निकासी न केवल फसल के जड़ों के लिए ऑक्सिजन में बाधा बनती है बल्कि अन्य सस्य प्रक्रिया के काम जैसे खरपतवार, मृदा मल्चिंग, उर्वरक अनुप्रयोग, निराकरण आदि में बाधा उत्पन्न करती है।

कटाई, झराई एवं सफाई

मध्य जुलाई से मध्य अगस्त तक की फसल 140 दिनों में जब कि अंतिम अगस्त से मध्य सितंबर वाली फसल 100 – 120 दिनों में परिपक्व हो जाती है | जब फसल की पूरी फलियाँ काले भूरे रंग की हो जाए तब इसकी कटाई करनी चाहिए। इसकी झराई हाथ से फली को पीटकर या फिर तिरपाल पर गठरी को बिछा कर ट्रैक्टर से कर सकते है। कटे हुए बीज फसल को अच्छी तरह से साफ कर लेना चाहिए।

बीज के लिए पौध संरक्षण रणनीति

- पटसन के अधिकांश रोगजनक बीज, मिट्टी और वायु जनित होते हैं। बीज बोने से पहले कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यूपी @ 2 ग्राम / किग्रा बीज से उपचारित करना चाहिए
- अगस्त-सितंबर में बोई गई फसल में कम से कम बीज संक्रमण (1.7%) और विवर्णता होती है इसके अलावा देर से बोई गई अवस्था में तना सड़न और जड़ सड़न की घटना भी बहुत कम होती है।
- बुआई के 4-6 दिन बाद नेल वीडर से निराई करने से या फिर 25-30 दिनों के बाद हाथ से खरपतवार निकालने से तना सड़न के रोगजनक का संक्रमण कम होता है।
- फली की परिपक्वता अवस्था में कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यूपी @ 0.2% के पर्ण छिड़काव से बीजों का संक्रमण और बीजों का झड़ना कम हो जाता है।

आर्थिक व्यवहार्यता

बीज की पैदावार (सितंबर में 8.1 क्विंटल प्रति हेक्टयर, मध्य अगस्त में बोई गई फसल में 13.2 क्विंटल प्रति हेक्टयर) बुवाई की तारीखों के साथ बदलती रहती है। कृषि लागत के आधार पर (₹26,000-30,000) और वापसी (60,000- 75,000 /-), लाभ लागत अनुपात उर्वरक (B: C = 2.21-2.50) जो चावल की खेती से अधिक है।

बीज की गुणवत्ता और मानक

बीज का अंकुरण अलग-अलग तिथियों के हिसाब से (बुवाई का समय: मध्य जून-मध्य सितंबर) 88.2 – 91.50% के मध्य होता है। बीज मानक के अन्य मापदंडों जैसे भौतिक शुद्धता, निष्क्रिय सामग्री, नमी की मात्रा को बीज प्रसंस्करण के दौरान आसानी से बनाए रखा जा सकता है। आनुवंशिक शुद्धता बनाए रखने के लिए प्रजनक या आधारीय बीज को प्रामाणिक स्रोत से एकत्र किया जाना चाहिए।

सारांश

मध्य अगस्त में बोई गई पटसन फसल में बीज की उपज (13.2 क्विंटल प्रति हेक्टयर), न्यूनतम बीज संक्रमण (1.7%), अंकुरण (88.2–91.50%) और अंकुरण की शक्ति भी बीज के मानक (80%) से ऊपर रहती है | फली सेटिंग या फली परिपक्वता अवस्था में कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यूपी @ 0.2% के पर्ण छिड़काव से बीज का कम संक्रमण, कम बीज विवर्णता एवं उच्च बीज उपज (11 क्विंटल प्रति हेक्टेयर) प्राप्त हुआ है। इस प्रकार अगस्त के दौरान पटसन के बीज की फसल की बुआई और फली की स्थापना या फली की परिपक्वता अवस्था में कार्बेन्डाजि म 50 डब्ल्यूपी @ 0.2% का छिड़काव से गुणवत्ता वाले पटसन के बीज प्राप्त करने के लिए सबसे प्रभावी है।

पटसन बीज प्रमाणीकरण के लिए बीज मानक

क्रम संख्या	बीज के मानक	आधारीय बीज	प्रमाणित बीज
1.	आनुवांशिक शुद्धता (%)	99	98
2.	भौतिक शुद्धता (%)	97	97
3.	निष्क्रिय पदार्थ (%)	3	3
4.	दूसरी प्रजाति के बीज (अधिकतम संख्या / कि.)	10	20
5.	अन्य फसल के बीज (अधिकतम संख्या / कि.)	10	20
6.	आपत्तीजनक खरपतवार (अधिकतम संख्या / कि.)	10	20
7.	न्यूनतम अंकुरण (%)	80	80
8.	नमी (%) : साधारण कन्टेनर	9	9
9.	वेपर प्रूफ कन्टेनर	7	7

तना सड़न

एंथ्रेक्नोज

फली में संक्रमण

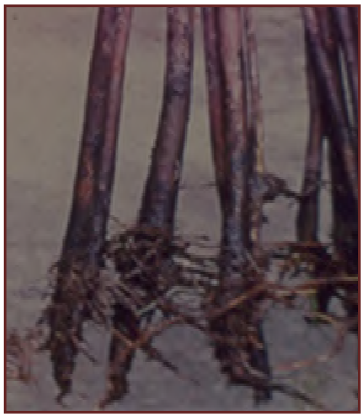

जड़ सड़न

सनई के विविध और पर्यावरण हितैषी उपयोग

हेम राज भण्डारी, मारुति आर. टी. एवं शिव कुमार
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

जलवायु-परिवर्तन धरती पर वास करने वाले प्राणियों के लिए एक बड़े संकट के रूप में उभरा है। इसके फलस्वरूप कई प्राणियों का अस्तित्व संकटमय हो गया है। विगत कुछ वर्षों में असामान्य रूप से एवं असमय घटित जलवायु संबन्धित घटनाएँ जैसे बाढ़, सूखा, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, असमय वृष्टि, तापमान में लगातार वृद्धि इत्यादि जलवायु परिवर्तन की झलक मात्र हैं। पिछले कुछ वर्षों में लक्षित जलवायु परिवर्तन की त्वरित गति ने मानव-जनित सभी क्रियाकलापों को अभूतपूर्व तरीके से प्रभावित किया है। कृषि भी इसके कुप्रभावों से अछूती नहीं है। असमय मौसमी घटनाओं के घटित होने से फसलों की उत्पादकता में कई कारणों जैसे फूल एवं फल बनने में बाधा, नए कीटों एवं रोगों की उत्पत्ति इत्यादि से ह्रास हुआ है। एक ओर जहां आधुनिक कृषि स्वयं जलवायु परिवर्तन के कुप्रभावों से प्रभावित हुई है वही दूसरी ओर वह स्वयं जलवायु परिवर्तन के कारकों विशेषतः ग्रीन हाउस गैसों जैसे नाइट्रस ऑक्साइड, मिथेन, कार्बन डाई ऑक्साइड आदि के उत्सर्जन का कारण बनी है। इसका मूल कारण रसायनों पर आधारित आधुनिक कृषि है।

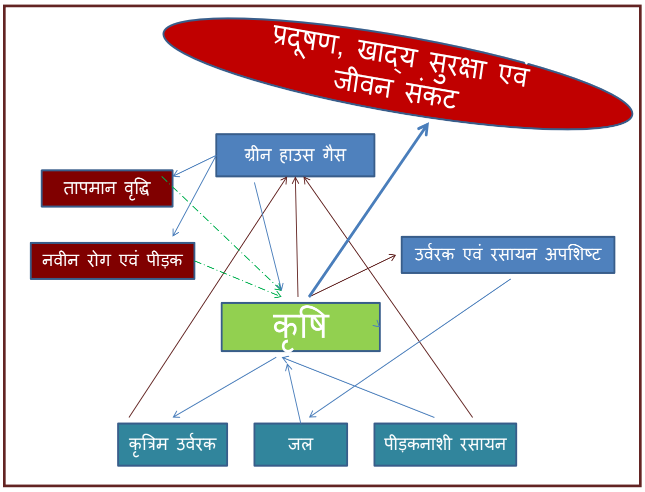

कृषि एवं जलवायु परिवर्तन के घटकों का अन्तः संबंध

लगातार बढ़ती जनसंख्या एवं खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग के मद्देनजर खाद्य उत्पादन हेतु रसायनों का उपयोग अपरिहार्य हो गया है। ऐसा भी कहा जा सकता है कि रसायनों पर आधारित आधुनिक कृषि ही भारत के लिए खाद्य-सुरक्षा की संबल है। फलतः रसायनों के उपयोग में आशातीत वृद्धि हुई है। रासायनिक उर्वरक विशेषतः यूरिया आधुनिक खेती के आवश्यकताओं में सबसे प्रमुख है। इसके साथ ही इन कारखानों से निकलने वाली द्रवीय अशुद्धियाँ जल स्रोतों को हानि पहुंचाती हैं। इन उर्वरकों के अंधाधुंध प्रयोग के कारण मृदा खराब होती है एवं जल स्रोतों का नाश होता है। मृदा के रासायनिक संघटकों का संतुलन बिगड़ने से उत्पादकता में कमी होती है।

इस परिप्रेक्ष्य में मृदा सुधार हेतु एवं स्वच्छ वातावरण हेतु कृषि में कुछ सुधार की आवश्यकता है। सनई एक ऐसी फसल है जिसे अपने विभिन्न गुणों के कारण पर्यावरण-हितैषी माना जाता है। इसकी खेती भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, ब्राज़ील, इंडोनेशिया, ताइवान, थायलैंड, ज़िम्बाब्वे आदि देशों में की जाती है। इसकी खेती मुख्य रूप से हरी खाद के लिए की जाती है किन्तु इसका उपयोग विविध रूपों में किया जा सकता है। यह भारतीय उपमहाद्वीप की एक प्रमुख रेशा फसल है जिसका उपयोग रस्सी एवं जाल बनाने में किया जाता है। सीमित मात्र में इसका उपयोग चारे एवं सब्जी हेतु किया जाता है।

प्राचीन काल से ही सनई ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक अभिन्न अंग भी रहा है। रेशे की घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ यह ग्रामीण रोजगार का भी स्रोत था। किन्तु विगत कुछ दशकों में कृषि के आधुनिकीकरण एवं कृत्रिम रेशों की उपलब्धता के कारण यह फसल खाद्य एवं नकदी फसलों से पीछे रह गयी। हरित-क्रान्ति के समय विकसित अल्प-कालीन धान्य फसलों की क़िस्मों की उपलब्धता, सिंचाई सुविधाओं के विस्तार एवं बाजार की उपलब्धता के कारण एक ही जमीन पर दो-तीन नकदी / धान्य फसलें की खेती की जाने लगी जिससे सनई जैसी फसलें लोगों की प्राथमिकताओं में नहीं रह गयी। कालांतर में कृषि आधुनिकीकरण के दुष्परिणाम के सामने आने से जैविक, धारणीय एवं टिकाऊ कृषि की संकल्पना को बल मिला एवं सनई जैसे फसलों पर वैज्ञानिकों का ध्यान गया। सनई में निहित कई गुणों के कारण इसे एक पर्यावरण हितैषी फसल माना गया है। इसके पर्यावरण हितैषी गुणों की विवेचना आगे की गयी है।

दलहनी कुल का सदस्य होने के कारण इस फसल की जड़ों में पाये जाने वाले जीवाणु (राइज़ोबियम) वातावरणीय नत्रजन को मिट्टी में संचित कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। सनई की फसल 60 दिनों के अंदर लगभग 80 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर संचित करती है। इसके अलावा तीव्र गति से वृद्धि होने के कारण एवं जल्दी सड़ने के कारण यह एक उपयुक्त हरी खाद मानी जाती है। हरी-खाद हेतु यद्यपि पौधे के सभी भागों को उपयोग में लाया जा सकता है, इसके पत्ते एवं शीर्ष भाग हरी खाद हेतु ज्यादा उपयुक्त माने जाते हैं क्योंकि इनमें सेलुलोज की मात्र कम होती है जिससे यह जल्दी सड़ सकता है। कई अध्ययनों के अनुसार सनई के पौधों में सबसे अधिक नत्रजन 50-60 दिन की अवस्था में पाई जाती है। अतः 50-60 दिन की फसल को काटकर मिट्टी में समान रूप से मिलाने से मृदा में संचित नत्रजन आगामी फसलों को प्राप्त होता है। प्रायः सनई को अप्रैल-मई में प्रति हेक्टेयर 40-60 किलोग्राम बीज की दर से बोया जाता है एवं 50-60 दिन की अवस्था में ट्रैक्टर चलाकर जमीन में मिला दिया जाता है। सनई द्वारा संचित नत्रजन जैविक रूप में होने के कारण फसलों को धीरे-धीरे उपलब्ध होता है जिससे आगामी फसलों को भरपूर फायदा होता है। इस तरह से संचित नत्रजन के कारण फसलों को दी जाने वाली कृत्रिम उर्वरकों में 25-30% तक कमी की जा सकती है। इससे मृदा स्वास्थ्य का ह्रास कम होता है। साथ ही सनई की हरी खाद अन्य तत्वों के उद्ग्रहण में सहायक सिद्ध होती है। ऐसा आकलन

किया गया है कि सनई की हरी खाद के उपयोग से ठंढे प्रदेशों के विभिन्न फसलों में कृत्रिम उर्वरकों के प्रयोग में 30-50% तक कमी लायी जा सकती है।

सनई की फसल

विगत दशकों में रासायनिक उर्वरकों के अंधाधुंध एवं असंयमित प्रयोगों के कारण मृदा के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों का ह्रास हुआ है। फलतः फसलों की उत्पादकता में कमी आई है एवं इसकी भरपाई के लिए अधिक उर्वरकों के उपयोग से कृषि में खर्च बढ़ा है एवं मृदा खराब हुई है। सतत अच्छी फसल पाने के लिए मृदा का स्वस्थ रहना आवश्यक है। सनई की फसल मृदा के स्वास्थ्य को पुनः स्थापित करने में सहायक सिद्ध होती है। सनई के पौधों को मिट्टी में मिलाने से मिट्टी हल्की एवं रंध्रयुक्त हो जाती है। इससे मिट्टी में हवा का संचार अच्छे से होता है जो जड़ों के विकास में सहायक होती है। इससे मिट्टी की जल-धारण क्षमता बढ़ती है। सनई के पौधों के मिट्टी में समविष्टि से मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ती है जो मिट्टी के सूक्ष्म-वातावरण को अच्छा कर देता है। इससे ह्यूमस बनने की प्रक्रिया तेजी से होती है। ऐसा वातावरण फसलों के स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। सनई की हरी खाद के प्रयोग से मिट्टी के अम्लमान (पीएच) में सुधार होता है। यह मिट्टी में पोषक तत्वों एवं आयनों के आदान प्रदान को बढ़ाता है। इसके अपशिष्ट मिट्टी में पोषक तत्वों के पुनःचक्रण में सहायक होते हैं। साथ ही यह मृदा-अपरदन को रोकने की क्षमता रखते है। सनई के पौधों के भाग एवं अपशिष्ट में C:N अनुपात लगभग आदर्श सीमा (20-25:1) में होने के कारण यह फसलों को नत्रजन उपलब्ध कराने में सहायक होता है।

सूत्रकृमि पौधों के लिए एक अति हानिकरक परजीवी सिद्ध होते है। खासकर सब्जी फसलों जैसे आलू, टमाटर, बैंगन इत्यादि में इनका प्रकोप अधिक होता है। इनके नियंत्रण के लिए रसायनों का छिड़काव किया जाता है जो मिट्टी को नुकसान पहुंचाने के साथ वातावरण को दूषित करते हैं। कई बार इन रसायनों के हानिकारक प्रभावों के कारण ऐसे खाद्य पदार्थों का उपभोग हमारे लिए हानिकारक होता है। सनई के पौधों में 'मोनोक्रोटालिन' नामक यौगिक पाया जाता है जो विभिन्न प्रकार के सूत्रकृमियों के नियंत्रण में बहुत प्रभावी होता है। ऐसा भी पाया गया है कि सनई के पौधे एवं उनके अपशिष्ट सूत्रकृमियों के शत्रु जैसे फफूंद के विकास में सहायक होते हैं फलतः सूत्रकृमियों का नियंत्रण होता है। सनई विभिन्न प्रकार के सूत्रकृमियों जैसे गतिहीन अन्तःस्थित (*मेलोइडोगाइन*, *हेटेरोडेरा*, *रोटीलेंकुलस* आदि) एवं चलायमन (*बेलानोलाइमस*, *जिफिनेमा*, *रोडोफोलस*) सूत्रकृमियों को नियंत्रित करता है।

खरपतवार फसलों को उपयुक्त मात्रा में पानी, प्रकाश एवं पोषक तत्वों से वंचित कर फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं। साथ ही यह खरपतवार फसलों के शत्रु कीटों एवं रोगों को आश्रय देते हैं। प्रायः खरपतवारों के नियंत्रण के लिए कई किस्म के रसायनों का उपयोग किया जाता है जिसके कई दुष्परिणाम होते हैं। इससे मिट्टी की जैविक शक्ति का नाश होता है। आक्रामक गति से वृद्धि एवं अधिक पत्ते होने के कारण यह प्रकाश को अवरुद्ध कर खरपतवारों के अंकुरण एवं वृद्धि में बाधा पहुंचाती है। इस कारण सनई खरपतवारों को नियंत्रित करता है। साथ ही इसके जड़ों से निकलने वाले कुछ तत्व खरपतवारों के अंकुरण को रोकते हैं।

कागज़ एवं लुगदी उद्योग के लिए कच्चे माल के तौर पर वृक्षों का उपयोग किया जाता है। बड़े पैमाने पर वृक्षों की कटाई की जाती है जो कि वातावरण के लिए बहुत हानिकरक है। विश्व में लगभग प्रति वर्ष 4 मिलियन हेक्टेयर वन की कटाई केवल कागज़ उद्योग हेतु की जाती है। वातावरण की शुद्धि, पर्यावरण में प्रदूषण की रोकथाम, कार्बन स्थिरीकरण करने में, पृथ्वी पर जैव-विविधता बनाए रखने में वृक्षों एवं वनों की अहम भूमिका से हम सभी भली-भांति परिचित है। बदलते परिदृश्य में कागज़ एवं लुग्दी उद्योग के लिए एक वैकल्पिक स्रोत की खोज से वनों के काटने पर रोक लगाई जा सकती है। कम काष्ठीयता एवं सेलुलोज की अधिक मात्रा होने के कारण सनई का लुग्दीकरण अपेक्षाकृत ज्यादा आसान एवं सस्ता है। सनई से बने कागज़ टिकाऊ पाये गए हैं। इसका उपयोग विशेष प्रकार के कागजों जैसे सिगरेट, टिशू पेपर एवं नोट के कागज बनाने हेतु किया जाता है।

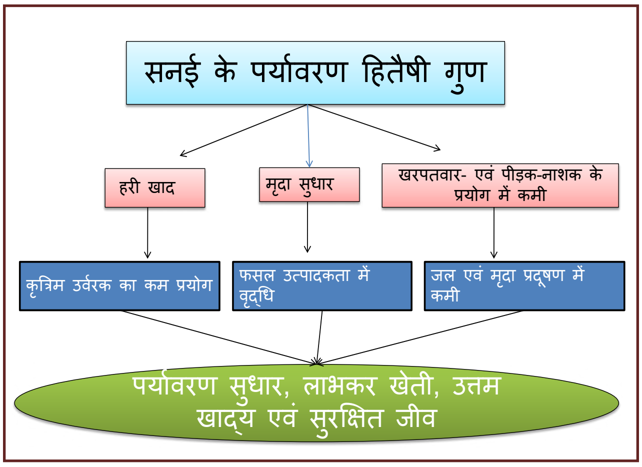

सनई के विविध एवं पर्यावरण हितैषी गुण

पर्यावरण प्रदूषण में पेट्रोल एवं डीजल ईंधन महत्वपूर्ण कारक है। इनके जलने से कई ग्रीन हाउस गैसें एवं अन्य विषैली गैसें उत्सर्जित होती हैं जो धरती पर जलवायु परिवर्तन एवं प्रदूषण का मुख्य कारक है। फलतः इनके विकल्पों की भी खोज जारी है। इसी परिदृश्य में सनई के द्वारा जैव ईंधन बनाने की कोशिश जारी है। सनई में अधिक मात्रा में सेलुलोज एवं

हेमीसेलुलोज पाया जाता है जो जैव ईंधन के लिए आवश्यक होता है। सनई की फसल से प्रति हेक्टेयर 80-90 गीगा जूल ऊर्जा उत्पन्न की जा सकती है। साथ ही सनई के तेल से बायो-डीजल भी बनाया जा सकता है। प्रायः वर्ष के सभी मौसम में तीव्र वृद्धि दर के कारण कम समय में अधिक जैव मात्रा उत्पन्न करने की क्षमता के कारण जैव-ईंधन हेतु यह एक उपयुक्त फसल है।

वातावरण प्रदूषण एवं वैश्विक तापमान वृद्धि में कार्बनडाइ-ऑक्साइड गैस का प्रमुख योगदान है। तापमान वृद्धि को नियंत्रित करने हेतु ऐसी पौध-प्रजातियों की खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है जो पर्यावरण से कार्बनडाइ-ऑक्साइड का शोषण कर हवा में इसकी मात्रा को काफी समय तक कम कर सके। सनई अपने तीव्र विकास एवं अधिक प्रकाश-संश्लेषण की क्षमता के कारण कार्बन-स्थिरीकरण हेतु एक उत्तम फसल हो सकता है। एक अध्ययन के अनुसार सनई प्रति वर्ग मीटर 481 ग्राम कार्बन अवशोषित कर जैव कार्बन के रूप में मिट्टी में जमा रखता है।

उपर्युक्त उदाहरणों द्वारा सनई के कई पर्यावरण हितैषी गुणों की विवेचना की गयी है। इसके उपयोग द्वारा खेती में सतत टिकाऊपन लाने के साथ वातावरणीय प्रदूषण को कम किया जा सकता है। इसके फलस्वरूप पृथ्वी पर जैव-विविधता को बरकरार रखा जा सकता है एवं कई मायनों में जलवायु-परिवर्तन के दुष्चक्र को रोका जा सकता है।

पटसन क्षेत्र के द्वारा उत्पादकता और कृषि आय बढ़ाने के लिए सरकारी योजनाएं और कार्यक्रम

जितेंद्र कुमार मीना, षम्ना ए., लक्ष्मी शर्मा, राकेश रोशन एवं अनिल कुमार
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

पटसन एक प्राकृतिक रेशे वाली फसल है जिसे भारत का सुनहरा रेशा भी कहा जाता है। भारत और बांग्लादेश मिलकर विश्व के 95 प्रतिशत पटसन का उत्पादन करते हैं। भारत में पटसन पूर्वी और उत्तर-पूर्वी भारत में व्यापक रूप से उगाया जाता है। यह 60 प्रतिशत से अधिक लघु एवं सीमांत किसानों का पारम्परिक व्यवसाय का स्रोत है। परन्तु कृत्रिम रेशों की बढ़ती हुई माँग, अप्रचलित मिलें और मशीनरी, कच्चे माल एवं उत्पादन की अनियमित आपूर्ति आदि चुनौतियों के मध्य उत्पादन एवं उत्पादक क्षेत्र में लगातार गिरावट देखी गई है। इन चुनौतियों को ध्यान में रखकर भारत सरकार एवं राज्य सरकारों ने कई योजनाओं एवं कार्यक्रमों का शुभारंभ किया है जो न केवल पटसन का उत्पादन बढ़ाने में सहायता करेंगे बल्कि लघु एवं सीमान्त किसानों की आय को 2022 तक दुगुना करने में काफी सहायता प्रदान कर सकते हैं।

इस संदर्भ में राष्ट्रीय पटसन बोर्ड ने 2015 पटसन-आई केयर परियोजना की शुरुआत की, इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य:-

1) 50% छूट पर गुणवत्तापूर्ण बीजों का वितरण
2) सीड ड्रिल की सहायता से पंक्तियों में पटसन की बुवाई करने से उपज में 10-15% की वृद्धि
3) हाथों से निराई करने के स्थान पर सिंगल व्हील वीडर/नेलवीडर द्वारा निराई की लागत को कम करना।

वर्ष 2017 में इस परियोजना को राज्य कृषि विस्तार मशीनरी द्वारा विस्तारित किया गया था जिसके लिए निम्नलिखित कदम उठाए गए थे :-

- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई) के अन्तर्गत पटसन-आई केयर कार्यक्रम
- कृषि मिशन में उप-मिशन (एसएमएएम) के अन्तर्गत कृषि उपकरणों की आपूर्ति।
- मनरेगा के अन्तर्गत पटसन सड़न के लिए टैंकों का निर्माण कराना
- किसानों की सहायता के लिए कृषि मेलों का आयोजन।

पिछले दो वर्षों में पटसन उत्पादन में किसानों की सहभागिता क्रमश: 147% व 169% बढ़ी है। जूट- आई केयर परियोजना के अन्तर्गत क्रिजैफ ने 'क्रिजैफ सोना' नामक सूक्ष्मजीवी आधारित मिश्रण पाउडर विकसित किया है। इससे रेशे की उपज में 6-8% एवं गुणवत्ता में कम से कम 1-2 ग्रेड तक बढ़ोतरी होगी |

2) राष्ट्रीय पटसन नीति 2005 :

- सरकार के राष्ट्रीय साझा न्यूनतम कार्यक्रम (एन.सी.एम.पी) के अन्तर्गत बाजार आधारित हस्तक्षेप के साथ पटसन प्रौद्योगिकी मिशन की स्थापना
- विविध और समग्र पटसन उत्पादों तथा पटसन हस्तशिल्प को प्रोत्साहन
- कृषि विस्तार, विपणन, अनुसंधान और विकास के माध्यम से क्षेत्र आधारित पहल।

3) राष्ट्रीय खाद्द सुरक्षा मिशन (एनएफएसएम)- वाणिज्यक फसलें (एन.एफ.एस.एम. – सी.सी.) के अन्तर्गत पटसन को सम्मिलित किया गया है। राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एन.एफ.एस.एम.) वाणिज्यिक कृषि (पटसन) के लिए कृषि मंत्रालय द्वारा प्रायोजित किया गया है। राज्यों अर्थात आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल, मेघालय, नागालैंड, ओडिशा, त्रिपुरा में उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन - वाणिज्यिक फसलों (एन.एफ.एस.एम. – सी.सी.) के तहत पटसन विकास कार्यक्रम लागू किया जा रहा है। इस योजना के तहत किसानों को लाभ पहुंचाने के लिए तकनीकों को अग्रिम पंक्ति प्रदर्शनों और प्रशिक्षण के माध्यम से हस्तांतरित करने पर जोर दिया गया है। पश्चिम बंगाल के नादि या, उत्तर 24 परगना, हुगली और पूर्व बर्धमान जिलों में कृषि विज्ञान केन्द्र के माध्यम से नवीनतम उच्च उपज देने वाली किस्मों और पटसन की अन्य उन्नत उत्पादन तकनीकों पर अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन भा.कृ.अनु.प.- केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (क्रिजैफ) द्वारा किया गया |

4) मेरा गाँव मेरा गौरव - मेरा गाँव मेरा गौरव योजना के अंतर्गत भा.कृ.अनु.प. - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान (क्रिजैफ) ने उत्तर 24 परगना, नादिया, हुगली एवं मेदिनीपुर जिलों के 55 गाँवों को अपना लिया। इस कार्यक्रम के द्वारा 1550 किसान भाइयों को लाभान्वित किया गया। इसी दौरान 16 कृषक वैज्ञानिक गोष्ठी कराई गई एवं लगभग 2000 प्रसार पुस्तिका बांटे गए। पटसन की नई क्रिस्मों के 550 किलोग्राम बीज को किसानों के बीच वितरित किया गया।

5) मृदा स्वास्थ्य पत्र - भारत सरकार के कृषि मंत्रालय की इस योजना में भा.कृ.अनु.प. - के. प. स. रे. अ. स. ने सक्रिय रूप से भाग लेते हुए किसानों को इस योजना की महत्ता से अवगत कराया। किसानों से मिट्टी की गुणवत्ता के साथ सही खाद की मात्रा के प्रयोग करने की गुजारिश की गई एवं मृदा स्वास्थ्य पत्रों का वितरण किया।

6) जनजातीय उप-योजना - इसके अंतर्गत पटसन उगाने वाले आदिवासी किसानों के तेजी से सामाजिक और आर्थिक विकास पर ध्यान दिया जाता है। इस मिशन के अंतर्गत भा.कृ.अनु.प.- के. प. स. रे. अ. स. में आदिवासी किसानों को उत्तम क्रिस्मों का बीज, सीड ड्रिल, नेल वीडर, संतुलित खाद की मात्रा एवं उत्तम सड़न विधि से अवगत कराया। इस मिशन की अच्छी बात ये रही की आदिवासी क्षेत्रों में भा.कृ.अनु.प.- के. प. स. रे. अ. स. तकनीकी से 22% पटसन उत्पादकता बढ़ी।

7) अनुसूचित जाति उप-योजना - अनुसूचित जाति के किसानों को पटसन की उन्नत खेती के उत्पादन तकनीकों से अवगत कराया। 2014 के बाद से अलग-अलग पटसन उगाने वाले क्षेत्रों के अनुसूचित जाति के पटसन किसानों के लिए भा.कृ.अनु.प.- के.प.स.रे.अनु.सं. द्वारा कई क्षमता निर्माण कार्यक्रम आयोजित किए गए। बेहतर पटसन किस्म के बीज, जूट सीड ड्रिल, नेल वीडर, सिंगल व्हील पटसन शेडर्स, क्रिजैफ सोना, मिट्टी परीक्षण किट जैसे इनपुट पटसन की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए चयनित गांवों में अनुसूचित जाति के किसानों को वितरित किए गए। समय पर दी गई जानकारी और इनपुट ने इन किसानों को पटसन की खेती से उत्पादन और मुनाफे में सुधार करने में मदद की थी।

8) पटसन के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य - जब भी कच्चे पटसन का बाजार मूल्य एक निश्चित स्तर से नीचे आता है, भारतीय पटसन निगम (जेसीआई) कृषि लागत और मूल्य आयोग की सिफारिश के आधार पर निर्धारित न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) पर कच्चा पटसन खरीदता है, कच्चे पटसन के एम.एस.पी. से किसानों को उचित न्यूनतम मूल्य सुनिश्चित करने और पटसन की खेती में निवेश और इस तरह देश में उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने की उम्मीद है। बढ़ी हुई एम.एस.पी. कृषि लागत और मूल्य आयोग की सिफारिशों पर आधारित है, जो एम.एस.पी. की सिफारिश करते समय उत्पादन की लागत, समग्र मांग-आपूर्ति की स्थिति और घरेलू और अंतरराष्ट्रीय कीमतों जैसे कई कारकों को ध्यान में रखती है।

9) प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना (पी.एम.के.एस.वाई.) - 1 जुलाई 2015 को प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना की शुरुआत की गई। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है की सिंचाई में पानी की कमी से कृषि को जो नुकसान होता है उससे किसानों को बचाया जा सके। इस योजना का मुख्य उद्देश्य यह है की कृषि योग्य भूमि को पर्याप्त मात्रा में पानी मिल सके। जिससे कि किसानों को खेती के लिए सिंचाई करने में पानी की कमी ना हो।

- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के माध्यम से सरकार यह चाहती है की पानी का उचित मात्रा में प्रयोग किया जाये तथा पानी को फ़िज़ूल खर्च होने से बचाया जा सके।
- जो ज़मीन कृषि के योग्य होगी उस ज़मीन तक इस योजना को पहुँचाया जाएगा।
- इस योजना का लाभ वे किसान ही ले पाएँगे जिनके पास अपनी स्वयं की खेती और अपना जल संसाधन होगा।
- ज़मीन के विस्तारीकरण पर भी ध्यान दिया गया है।
- प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना में बेहतर सिंचाई व्यवस्था पर जोर दिया गया है।
- पानी का जो अनियंत्रित और व्यर्थ का बहाव है उसे रोककर उसके जल को प्रयोग में लाना भी इसका मुख्य उद्देश्य है।

इससे अर्थव्यवस्था में संतुलन को स्थापित किया जा सकेगा जिससे किसानों को सिंचाई में हो रहे नुकसानों से बचाया जाएगा। प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के माध्यम से कृषि में विस्तार होगा, उत्पादकता में वृद्धि होगी जिससे अर्थव्यवस्था का पूर्ण विकास होगा। योजना के लिए केन्द्र द्वारा 75% अनुदान दिया जाएगा और 25% जो खर्चा रहेगा वह राज्य सरकार द्वारा किया जाएगा।

10) प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना (पीएमएफबीवाई) - किसानों द्वारा सभी खरीफ फसलों के लिए केवल 2% एवं सभी रबी फसलों के लिए 1.5% का एक समान प्रीमियम का भुगतान किया जाना है। वार्षिक वाणिज्यिक और बागवानी फसलों के मामले में प्रीमियम केवल 5% होगा। किसानों द्वारा भुगतान किये जाने वाले प्रीमियम की दरें बहुत ही कम हैं और शेष प्रीमियम का भुगतान सरकार द्वारा किया जाएगा ताकि किसी भी प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं में फसल हानि के लिए किसानों को पूर्ण बीमित राशि प्रदान की जाए। सरकारी छूट पर कोई ऊपरी सीमा नहीं है। भले ही शेष प्रीमियम 90% हो, यह सरकार द्वारा वहन किया जाएगा।

योजना के उद्देश्य

- प्राकृतिक आपदाओं, कीट और रोगों के परिणामस्वरूप अधिसूचित फसल में से किसी की विफलता की स्थिति में किसानों को बीमा कवरेज और वित्तीय सहायता प्रदान करना।
- कृषि में किसानों की सतत प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए उनकी आय को स्थायित्व देना।
- किसानों को कृषि में नवाचार एवं आधुनिक पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
- कृषि क्षेत्र में ऋण के प्रवाह को सुनिश्चित करना।

अन्य पहलें :-

1) पटसन पैकेजिंग सामग्री (पैकेजिंग सामग्री में अनिवार्य उपयोग) अधिनियम, 1987 (जेपीएम अधिनियम) का कुल उत्पादन के न्यूनतम प्रतिशत तक विस्तार किया गया है।

सरकार ने पटसन पैकेजिंग सामग्री (जेपीएम) अधिनियम, 1987 के अंतर्गत सभी अनाजों की शत प्रतिशत पैकेजिंग में पटसन की बोरियों का इस्तेमाल अनिवार्य करने और 20 प्रतिशत चीनी की पैकिंग अनिवार्य रूप से पटसन की अलग-अलग बोरियों में करने की मंजूरी दी है। इस निर्णय से पटसन उद्योग के विकास को बढ़ावा मिलेगा, कच्चे पटसन की गुणवत्ता एवं उत्पादकता बढ़ेगी, पटसन क्षेत्र का विविधीकरण होगा और इसके साथ ही पटसन उत्पाद की मांग बढ़ेगी। सरकार की ओर से उठाया गया यह कदम अत्यंत महत्वपूर्ण है। लगभग 3.7 लाख कामगार और कृषि क्षेत्र से जुड़े लाखों परिवार अपनी आजीविका के लिए पटसन क्षेत्रों पर ही निर्भर है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार निरंतर ठोस प्रयास करती रही है। इस निर्णय से पश्चिम बंगाल, बिहार, ओडिशा, असम, आंध्र प्रदेश, मेघालय और त्रिपुरा में रहने वाले किसान एवं कामगार लाभान्वित होंगे।

2) **पटसन के कच्चे माल का बैंक (जे.आर.एम.बी) योजना:** पटसन के कच्चे माल को छोटे-छोटे कारीगरों, उद्दमियों को उनकी वर्तमान आवश्यकता को पूरा करने के लिए मिल मूल्य पर स्थानीय रूप से उपलब्ध करने के लिए।

3) **पटसन डिजाइन सेल:** नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ डिजाइन (एन.

जे.डी.) अहमदाबाद के प्राकृतिक रेशे हेतु अभिनव केन्द्र (आई. सी.एन.एफ.) के अंतर्गत।

4) **सामुदायिक पटसन सुविधा केन्द्र (सी.एफ.सी):** पटसन के विविध उपयोगों के विकास में कारीगरों के प्रशिक्षण, अवसंरचना, मशीनरी और विपणन में महिला स्वयं सहायता समूहों को सहायता प्रदान करना।

5) एनजेबी द्वारा कार्यान्वित रिटेल आउटलेट योजना जो चयनात्मक और व्यापक उपयोग के लिए आपूर्ति श्रृंखला और जे डी पी की थोक आपूर्ति में मदद करती है।

भा.कृ.अनु.प.- के.प.स.रे.अनु.सं. के उन्नत तकनीकी उपकरणों के प्रयोग का प्रशिक्षण संस्थान में दिया गया तथा साथ ही तकनीकी उपकरण: सीड ड्रिल, नेल वीडर, क्रिजैफ सोना एवं उन्नत क़िस्मों के बीजों का वितरण किया गया ताकि पटसन के उत्पादन के साथ-साथ किसानों की आय में भी वृद्धि हो और इसके फलस्वरूप प्रधानमंत्री मोदी जी का सपना, 2022 तक किसानों की दुगुनी आय को पूरा किया जा सके।

आगे की राह

पटसन को खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) द्वारा भविष्य का रेशा कहा गया है। चूंकि, भारत पटसन उत्पादन में अग्रणी देश है इसलिए अभी वर्तमान परिस्थिति (प्लास्टिक प्रतिबंध) को अपना देश एक सुवसर मान कर इस क्षेत्र में अपना सर्वोच्च स्थान बनाकर पटसन रेशे को पुन: 'स्वर्णिम रेशा' बनाए

पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित बनाए रखने में पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों की भूमिका

विकास मंगल, ए. के. सिंह, जितेंद्र कुमार मीना एवं सुमन राय
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

प्रस्तावना

वैश्विक औद्योगिकीकरण के परिणामस्वरूप भारी धातुओं के साथ मिट्टी का प्रदूषण पिछले कुछ वर्षों में उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया है जिसके परिणामस्वरूप पारिस्थितिकी तंत्र अर्थात् भौतिक प्रणाली या जीवित जीवों में विकार, अस्थिरता या हानि हो रही है। कृषि में उपयोग होने वाले रसायन, दूषित सिंचाई जल या विभिन्न औद्योगिक प्रक्रियाओं का अत्यधिक उपयोग पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनता है और दुनिया भर में एक प्रमुख चिंता का विषय बना हुआ है। दूषित मिट्टी पर उगाई जाने वाली कई खाद्य और चारे की फसलें भारी धातुओं की उच्च मात्रा को जमा कर सकती हैं जिससे भविष्य मे मानव और पशु स्वास्थ्य के लिए एक गंभीर खतरा पैदा हो सकता है। इस प्रकार के दूषित पदार्थों को कम करने के लिए (मिट्टी या पानी से), खतरनाक तत्वों या यौगिकों को हटाने के लिए विभिन्न पौधों की प्रजातियों को उपयोग में लाया जा सकता है|

पटसन

वैश्विक स्तर पर पटसन दूसरा सबसे बड़ा प्राकृतिक रेशा फसल है जिसका अनुमानित औसत उत्पादन लगभग 3.4 मिलियन टन प्रति वर्ष है। भारत दुनिया में पटसन के सामान का सबसे बड़ा उत्पादक है जो वैश्विक उत्पादन का लगभग 60% योगदान देता है और 4.85 मिलियन कृषि परिवारों, औद्योगिक श्रमिकों और व्यापारियों को रोजगार प्रदान करता है। भारत में पटसन की खेती मुख्य रूप से देश के पूर्वी और उत्तर-पूर्वी क्षेत्र तक ही सीमित है। पश्चिम बंगाल, बिहार, ओडिशा और असम में पटसन की खेती के तहत 98.41% क्षेत्र है, साथ ही कुल कच्चे पटसन का उत्पादन 98.43% है। पटसन के रेशों का उपयोग हेसियन कपड़ा, बोरी, पटसन यार्न, सामान का थैला, तिरपाल, जियोटेक्सटाइल्स, फ्लोर मैट्स, कारपेट, कैनवास आदि बनाने के लिए किया जाता है।

ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन और कार्बन पृथक्करण

पटसन रेशा का जीवन चक्र इसकी खेती से शुरू होता है और कटाई के बाद इसे तालाबों में सड़न विधि (रेटिंग) के माध्यम से रेशा की निकासी होती है। भूमि की तैयारी, निराई, रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक पटसन की खेती में उपयोग किए जाने वाले प्रमुख ऊर्जा स्रोत हैं। पटसन रेशा फसल के कार्बन पदचिह्न का अनुमान 566 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड प्रति टन रेशा उत्पादन के बराबर लगाया गया है। पटसन रेशा फसल जीवन चक्र मूल्यांकन से यह भी पता चलता है कि पटसन के हरे पौधों द्वारा सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव कार्बन पृथक्करण है। औसतन, पटसन की खेती के तहत 0.97-2.8 टन पत्तियां और जड़ें प्रति हेक्टेयर प्रतिवर्ष मिट्टी में मिलाया जाता है। कच्चे पटसन उत्पादन से लगभग 3.88 टन कार्बन प्रति हेक्टेयर का पृथक्करण होता है जो कई वन वृक्ष प्रजातियों के बराबर है। लगभग 0.75 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर पटसन खेती के माध्यम से भारत हर साल वातावरण से लगभग 12 मिलियन टन कार्बन डाइऑक्साइड को कम कर सकता है जिसका मूल्य लगभग 15 करोड़ अमरीकी डालर हो सकता है। इसके अलावा कृत्रिम रेशा की तुलना में पटसन के रेशा का कार्बन पदचिह्न 20-50% कम पाया गया है।

पटसन की खेती पर जलवायु परिवर्तन के प्रभाव

हाल के वर्षों में जलवायु परिवर्तनशीलता का प्रभाव पटसन उत्पादन में महत्वपूर्ण उतार-चढ़ाव पैदा कर रहा है और लंबी अवधि में इसकी पैदावार को प्रभावित करने की संभावना है। पिछले 100 वर्षों के मौसम के आंकड़ों में जलवायु के तापमान में उल्लेखनीय वृद्धि और आईजीपी क्षेत्र (निचला भारत-गंगा का मैदान) जहां पटसन उगाए जाते हैं वहां मॉनसूनी वर्षा में बड़े बदलाव का संकेत मिलता है। वार्षिक औसत हवा के तापमान में 1.04°C की वृद्धि दर्ज की गई है और 2050 के दशक तक, औसत परिवेश तापमान में और 2°C वृद्धि की उम्मीद है। जलवायु कारकों में, पटसन पौधों की वृद्धि के लिए तापमान और वर्षा सबसे प्रमुख घटक है। पटसन मुख्य रूप से वर्षा आधारित फसल के रूप में उगाया जाता है और इसके विकास के लिए लगभग 500 मि.मी. पानी की आवश्यकता होती है। पिछले 40 वर्षों में, मध्य मार्च से जून के प्रथम सप्ताह तक वर्षा की कमी 40-50% तक पाई गई है। वर्षा का असमान वितरण तथा पटसन के शुरुआती मौसम में सूखा एक गंभीर अजैविक कारक है जो जड़ों द्वारा पोषक तत्वों के अधिग्रहण को रोकता है और पटसन उत्पादन को सीमित करता है। एक कुशल प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन प्रणाली द्वारा जलवायु समर्थित पटसन कृषि प्रौद्योगिकी को अपनाकर उत्पादन क्षमता में सुधार की व्यापक गुंजाइश है। सूखा सहिष्णु खेती की तकनीक और फसल की किस्मों को विकसित करने के लिए भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा कुछ प्रयास पहले ही किए जा चुके हैं। खरपतवार नियंत्रण विधियों, नए कीटों और रोगों के प्रबंधन अंतर–फसल पद्धति और उन्नत सड़न विधि के साथ उच्च स्थायी उपज सूचकांक प्राप्त किया जा सकता है।

रेमी

रेमी एक पर्यावरण हितैषी पौधा है और सबसे अच्छी गुणवत्ता वाले फ्लोएम रेशे का उत्पादन करता है जिसे उत्पादन कर किसान भारी लाभ कमा सकते हैं। कुछ परीक्षण ये बताते हैं कि रेमी की फसल मिट्टी से भारी धातुओं को हटाकर मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मदद करती है। इस प्रकार यह पर्यावरण के खतरों को कम करके पारिस्थितिक संतुलन भी बनाए रखता है|

पर्यावरण संरक्षण में रेमी का महत्व

रेशे वाले पौधे अन्य पारंपरिक पौधों की तुलना में ज्यादा पारिस्थितिक लाभ प्रदान करते हैं क्योंकि वे कार्बन, ऊर्जा की बचत, ग्रीनहाउस गैस की कमी और गैर-नवीकरणीय संसाधनों के अनुक्रम में योगदान कर सकते हैं।

रेमी में भारी धातुओं (जैसे केडमियम, जस्ता, सीसा) का नकारात्मक प्रभाव नहीं पड़ता है। यह केडमियम को अवशोषित करने के साथ-साथ अपने उच्च बायोमास (लगभग 2 मीटर ऊंचाई), तेजी से विकास (पूर्ण विकास चक्र के 50-90 दिन) और प्रति वर्ष तीन कटाई उपज प्राप्त करने की क्षमता रखता है।

रेमी का उपयोग यूरेनियम प्रदूषण को कम करने के लिए भी किया जा सकता है। इसके अलावा रेमी व्युत्पन्न बायोचार को बीटा साइक्लोडेक्स्ट्रिन (एल- ग्लूटामिक एसिड) के साथ संशोधित करके उपयोग करने से यह क्रोमियम के अवशोषण को बढ़ाता है। रेमी का पर्यावरण अनुकूलन प्रभाव मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ पर भी है। यह पाया गया है कि रेमी की खेती के 13 साल बाद मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों, नाइट्रोजन और फॉस्फोरस के भंडार में काफी वृद्धि होती है। नत्रजन की जितनी मात्रा की आवश्यकता है उसकी आधी मात्रा को रेमी खाद के द्वारा पूरा किया जा सकता है; यह उपचार रेशे की वृद्धि और उपज को बनाए रखता है। रेमी की फसल को पहाड़ी क्षेत्रों में उगाया जा सकता है, इस प्रकार इसका उपयोग पहाड़ी क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव और जल अपवाह को कम करने में किया जा सकता है।

केनाफ

केनाफ में उच्च प्रकाश संश्लेषक और आत्मसात की क्षमता होती है। केनाफ की पत्ती में नत्रजन स्थिरीकरण दर 32-37 माइक्रो मोल CO_2 प्रति वर्ग मीटर तक होती हैं। इस फसल की उच्च दक्षता ही केनाफ और इसके औद्योगिक उत्पादों को कार्बन डाइऑक्साइड सिंक के रूप मे महत्व देती है। केनाफ को ऊष्मा, बायोपावर, जैव ईंधन या रसायनों में परिवर्तित किया जा सकता है। इन गुणों के कारण केनाफ को एक वैकल्पिक समर्पित ऊर्जा फसल के रूप मे उपयोग किया जा सकता है।

सनई

सनई फसल रेशा उत्पादन के साथ-साथ हरी खाद के रूप में भी उपयोग की जाती है। लगभग 85-90 दिनों की होने के बाद सनई की फसल रूट नोड्यूल के रूप में 50-60 किलोग्राम / हेक्टेयर नत्रजन तक का योगदान करती है। रेशा फ़सल की कटाई के बाद, इसका शीर्ष भाग (ऊपर से 30 सेमी) को मिट्टी में मिलाया जा सकता है जिससे मिट्टी की उर्वरता में सुधार और आगे लगाने वाली फसलें जैसे चावल, गेहूं और गन्ने की पैदावार बढती है।

सीसल

सीसल की फसल मुख्य रूप से मध्यम बंजर भूमि में उगाई जाती है, जहाँ अन्य वर्षा आधारित फसल नहीं उगाई जा सकती है। इस फसल को कम पानी की आवश्यकता होने, उच्च जल उपयोग दक्षता (सीएएम प्लांट) और अधिक तापमान में भी उगाया जा सकता है | आदिवासी किसानों को अच्छा आर्थिक उत्पादन देने के साथ - साथ यह बदलती जलवायु स्थिति को भी झेल सकता है। इसकी खेती के लिए न्यूनतम रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों की आवश्यकता होती है और बंजर भूमि में मिट्टी के क्षरण को नियंत्रित करने में भी मदद करता है।

निष्कर्ष

पटसन और समवर्गीय रेशा फसलों को आमतौर पर पर्यावरण के अनुकूल माना जाता है। प्राकृतिक रेशा फसलों की खेती कम ऊर्जा की खपत करती है, मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने में मदद करती है और उनके जीवन चक्र के अंत में ये रेशे वाले पौधे जैव अपघटनीय भी होते हैं। प्राकृतिक रेशा जैव-आधारित आर्थिक विकास के लिए एक प्रमुख नवीकरणीय संसाधन हैं और प्लास्टिक के उपयोग को कम करने में अहम भूमिका निभा सकता है।

रेमी रेशा : गुणवत्ता पूर्ण कपड़े बनाने के लिए अनुकूल रेशा

काजल दास और मोनू कुमार
रेमी अनुसंधान केन्द्र , सरभोग , बारपेटा , असम

परिचय :

रेमी विश्व में पाई जाने वाली सबसे पुरानी एवं मजबूत प्राकृतिक रेशा फसलों में से एक है जो कि *बोहमेरिया निविया* एल. गौड़ पेड़ की छाल से प्राप्त होता है। यह रेशा विभिन्न आयामों जैसे बंडल तन्यता, गीला होने के बाद मजबूती, रेशा की लम्बाई, पतलापन, लम्बाई एवं चौड़ाई का अनुपात इत्यादि में अन्य प्राकृतिक रेशा से काफी बेहतर हैं। रेमी रेशा अपने भौतिक विशेषताओ के साथ – साथ अन्य अद्वितीय विशेषताओ जैसे रेशम जैसा प्रतीत होना, सूक्ष्मजीव प्रतिरोधी गुण, औषधीय गुण, रेमी पत्ते का ऑक्सीकरण रोधी गुण इत्यादि से परिपूर्ण होते हैं। इसी कारण रेमी पौधे को अंतर्राष्ट्रीय बाजार में अत्यधिक मूल्यवान माना जाता हैं। चीन रेमी रेशा का मुख्य उत्पादक (>90%) देश है जिसके बाद ब्राजील एवं फीलिपींस का स्थान आता है। भारत में रेमी की काफी संभावनाए है। "चीन ग्रास ", "ग्रास लिनेन" या "चीन लिनेन" के प्रचलित नाम से रेमी को जाना जाता है। रेमी रेशा का इतिहास में भी उल्लेख हैं, मिस्र देश के राजसी परिवार के कपड़े बनाने में और मृतक के ममिकरन में इसका उपयोग किया जाता था। रेमी रेशा मुख्यतः अपने अद्वितीय मजबूती एवं अवशोषक गुण होने के कारण कपास एवं रेशम के साथ मिश्रित किया जा सकता है। इस रेशे का उपयोग परिधान, परदा, असबाब, तौलिया एवं अन्य कपड़े इत्यादि के लिए किया जाता है। रेमी रेशा को अन्य प्राकृतिक एवं कृत्रिम रेशा के साथ मिश्रित करके कपड़े एवं विविध वस्तु के निर्माण में अनेक संभावनाए है। परित्यक्त रेशा का उपयोग मुद्रा नोट तथा सिगरेट पेपर के लिए किया जाता है जबकि लकड़ी के हिस्से का उपयोग अनेक प्रकार के जैव-नाशी पदार्थ जैसे प्लाईवुड, पार्टिकल बोर्ड, फ़ाइबर बोर्ड इत्यादि बनाने में किया जाता है।

रेमी का उत्पादन एवं उत्पादकता

रेमी फसल की अच्छी उपज के लिए उदासीन पी एच वाली दोमट एवं बलुई दोमट मिट्टी सबसे उपयुक्त होती है। रेमी के लिए समशीतोष्ण जलवायु के साथ सामान्य रूप से 1500-2000 मि. मी. वार्षिक वर्षा काफी उपयोगी होती है। इसके अच्छे विकास के लिए अनुकूलतम तापमान 25^{0}C-35^{0}C होता है। रेमी खेती के प्राकृतिक दृष्टिकोण के अनुसार हिमालय के तलहटी, असम का ब्रह्मपुत्र घाटी, पश्चिमी घाट, अरुणाचल प्रदेश एवं मेघालय सबसे उपयुक्त है। रेमी को लगाने का समय सिंचित क्षेत्र मे वर्ष भर एवं वर्षा आधारित भूमि में अप्रैल से सितंबर तक होता है। यह अर्ध-चिरस्थाई पौधा होता है जिससे छह वर्ष तक फसल की कटाई की जा सकती है।

रेमी पौधा

रोपण सामग्री, रोपण तथा भूमि तैयारी जैसे खर्च सिर्फ प्रथम वर्ष तक ही होता हे जबकि दूसरे वर्ष और उसके उपरांत अतिरिक्त खर्च नहीं होता है। रेमी पौधा प्रायः प्रकंद (6-8 क्विंटल/हेक्टेयर), प्लांटलेट, तना कटिंग और बीज के द्वारा उगाया जाता है। शुष्क रेशा उत्पादन 16-24 क्विंटल/हेक्टेयर होता है। कच्चा रेमी रेशा की बाजार में कीमत Rs.100 प्रति किलोग्राम है।

रेमी रेशा की विशेषता

रेमी एककोशिकीय रेशा होता है जो सबसे मजबूत एवं लंबा पादप कोशिका होता है। रेशा को पौधे की छाल से निकाला जाता है जिसे बास्ट/फ्लोएम रेशा कहते है। प्रोकैम्बियम कोशिका विभाजन के फलस्वरूप रेशा कोशिका बनता है जिसकी वृद्धि कोशिका की लंबाई और पौधे के अक्ष के अनुसार होती है। प्रति इकाई क्षेत्रफल में कोशिका की संख्याओं का रेशा के उत्पादन के साथ अच्छा सह-संबंध होता है जिसके कारण यह रेशा के उत्पादन बढ़ाने के लिए एक अच्छा चयन का मापदंड है। प्रत्येक रेशा दीर्घ वृत्ताकार, चिकना और अंडाकार होता है एवं यह तना के कोर्टिकल क्षेत्र में पृथक रूप में या समूह में होता है। रेमी दूसरे रेशा की तुलना में तना से प्राप्त होने वाले रेशा में सबसे लंबा और मजबूत होता है।

रेमी रेशा

रेमी रेशा कपड़ा बनाने के उद्देश्य के लिए सबसे उपयुक्त होता है जो दूसरे प्राकृतिक एवं कृत्रिम रेशा में आसानी से मिश्रित किया जा सकता

है। रेमी रेशा में अनेक असाधारण गुण होते है जो इसे दूसरे बास्ट रेशा से अलग करते है। रेमी रेशा सबसे मजबूत, चमकीला, अतिउत्कृष्ट गुणवत्ता से परिपूर्ण और टिकाऊ होता है। सबसे मजबूत प्राकृतिक रेशा होने के कारण इसे "स्टील तार रेशा" भी कहते है। यह रेशा कपास की तुलना में ज्यादा लंबाई और चौड़ाई का अनुपात तथा दोगुना मजबूत होता है। इसी गुण के कारण बुलेट प्रूफ पैनल में रेमी आधारित सम्मिलित रेशा उपयोग होता है। रेमी रेशा नमी अवशोषण के बाद और अधिक मजबूत हो जाता है। यह रेशा अनेक घोल एवं घर्षण से भी प्रतिरोधी होता है। गोंद रहित रेमी रेशा में सेलुलोज की मात्रा > 90% से ज्यादा होती है इसके अलावा थोड़े मात्रा में हेमी-सेलुलोज *(<3%)* तथा आंशिक मात्रा में लिग्निन *(<0.5%)* होता है। इस रेशा में 85% से ज्यादा α-सेलुलोज की मात्रा होती है। सेलुलोज श्रृंखला में 8 ग्लुकोज़ इकाई द्वारा क्रिस्टलीय संरचना बनती है जो इस संरचना को अत्यधिक मजबूत व लचीला बनाती है। सेलुलोज इकाई की बहुलकीकरण की मात्रा रेमी (5800) में, कपास (4700) एवं पटसन (4700) की तुलना में बहुत अधिक होती है। बहुलकीकरण की ज्यादा मात्रा सूक्ष्मजीव प्रतिरोधी एवं रेशा श्यानता का सूचक है। अत्यधिक सेलुलोज एवं बहुलकीकरण रेमी रेशा को फफूंद तथा जीवाणु से बचाता है। रेमी रेशा का रासायनिक गुण में काफी परिवर्तनशीलता पायी जाती है और यह गुण रेमी की प्रजाति, आयु, प्रसंस्करण विधि, गोंद की मात्रा एवं कृषि जलवायु में काफी प्रभावित होता है। प्रायः रेमी रेशा अन्य मुख्य वस्त्र रेशा से मजबूत, चमकीला तथा टिकाऊ होता है। रेमी रेशा दूसरे रेशा जैसे कपास, सन, जूट आदि की तुलना में अधिक तन्यता ताकत, अवशोषी तथा जल्दी सूखने का गुण से युक्त होता है। रेमी रेशा की महीनता अन्य वस्त्र रेशा जैसे कपास, रेशम आदि से तुलनीय है। रेशा की लंबाई तथा तन्यता सभी बास्ट रेशा की तुलना में सबसे अधिक होती है।

रेमी रेशा के वस्त्र के उपयोग में अनुकूलता तथा इससे बनने वाले उत्पाद में विविधता :

रेमी रेशा अपने चमकीलेपन, मजबूती, टिकाऊपन तथा अन्य प्राकृतिक एवं कृत्रिम रेशा में मिश्रित करने योग्य होने के कारण वस्त्र निर्माण में काफी उपयुक्त होते है। उष्णकटिबंधीय देशों में कपड़े बनाने में काफी उपयोगी होते है क्योंकि इन सारे गुणों के साथ नमी अवशोषण करने की क्षमता अच्छी होती है। रेमी रेशा को ऊन के साथ भी अच्छी तरह से मिश्रित किया जा सकता है। कपास, रेशम, सन इत्यादि मिश्रित रेमी रेशा से बने हुए कपड़े चमकीले, आरामदेह तथा टिकाऊ होते है और अन्य रेशा की तुलना में काफी बेहतर होते है। रेमी रेशा गीला होने पर अधिक मजबूत हो जाता है और यह सूक्ष्मजीव से भी प्रतिरोधी होता है। इसलिए इस महत्वपूर्ण रेशा का उपयोग पर्दे, तौलिया, रस्सी, धागा, डोरा, मछली पकड़ने का जाल, आग बुझाने का पाइप, पानी रखने का थैला, औद्योगिक पैकेजिंग, कैनवास, असबाब कपड़े, सजावट सामान, जूते सिलने वाला धागा इत्यादि में सफलतापूर्वक इस्तेमाल किया जाता है। समाचार पत्र के बढ़ते उपयोग से पर्यावरण के ऊपर नकारात्मक प्रभाव के कारण सिर्फ जंगल के संसाधन पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। कागज लुगदी के कच्चे माल की आपूर्ति 35% तक बाँस/कठोर लकड़ी से, 30% तक कृषि अवशेष जैसे पुआल एवं खोई से तथा शेष 35% बेकार कागज से की जाती है। रेमी में सेलूलोज की भरपूर मात्रा होने के कारण मुद्रा नोट जैसे उच्च गुणवत्ता वाले कागज के कच्चे माल के लिए काफी उपयुक्त है। हस्तनिर्मित उच्च गुणवत्तापूर्ण कागज को भी रेमी से बनाया जा सकता है जो कि काफी कीमती होता है। मोटरगाड़ी, वायुयान एवं रेलवे के कम्पोजीट बनाने में रेमी रेशा का उपयोग किया जाता है। इसके अलावा पार्टिकल बोर्ड, अग्निमंडल, मध्यम घनत्व वाले रेशा रेमी से बनाया जा सकता है। सुक्ष्मजीवी विधि द्वारा रेमी गोंद निकालने की प्रक्रिया में उपयुक्त घोल पेक्टिनोलाइटीक एंजाइम सूत्रीकरण के लिए तैयार किया जाता है जिसे वस्त्र तथा खाद्य प्रसंस्करण उद्योग में अत्यधिक उपयोग किया जाता है। बाजार में रेमी रेशा की मांग के अनुरूप इसका उत्पादन नहीं होता है। इसलिए भारतीय किसानों के लिए नियमित खेती के अतिरिक्त रेमी की खेती की भरपूर संभावनाएं है।

पटसन में पीली मकड़ी की समस्या और इसके प्रबंधन की संभावनाएं

एस. सतपथी, बी. एस. गोटयाल, वी. रमेश बाबू एवं विकास मंगल
भा.कृ.अनु.प.-केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान, बैरकपुर, कोलकाता

पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलें बहुउपयोगी प्राकृतिक तना रेशे वाली फसलें है जिनका वाणिज्यिक, पर्यावरणीय और सामाजिक – आर्थिक महत्त्व बहुत अधिक है | मुख्य रूप से दक्षिण एशियाई देशों में धान केन्द्रित फसल चक्र में वर्षा आधारित फसल के रूप में पटसन उगाया जाता है | भारत, विश्व में पटसन उत्पादन में सबसे आगे है जो विश्व उत्पादन का 66 % हिस्सा है | पिछले 50 वर्षो के दौरान पटसन की उत्पादकता में दो गुना की वृद्धि हुई है | मौजूदा उत्पादकता 25.8 क्विंटल प्रति हेक्टयर है फिर भी पटसन एवं समवर्गीय रेशा फसलों की उत्पादकता बढ़ाने में कई जैविक और अजैविक दबाव हैं जिनमें से जैविक बाधाओं के कारण होने वाली हानि ज्यादा महत्वपूर्ण है | पिछले कुछ दशकों के दौरान, पटसन की खेती के लिए उपयोग के प्रारूप में आमूल परिवर्तन ने पटसन में सापेक्ष कीट स्थिति में क्रमिक बदलाव किया है | कीट, मकड़ी और गोल कृमि से संबन्धित नाशीजीवियों की सत्रह अलग – अलग प्रजातियाँ है जो पौधों के विकास के विभिन्न चरणों में पटसन को नुकसान करती है |

पटसन में पीली मकड़ी की समस्या

पटसन की फसल में जलवायु का परिवर्तन नाशीजीवियों की विविधता एवं जैविक दबाव को बढ़ा रहा है | इन फसलों में कीटों का प्रकोप अधिक हो गया है और कुछ सामान्य नुकसान करने वाले कीट भी अब प्रमुख कीटों की श्रेणी में आ गए है | पटसन की फसल में अपनाई जाने वाली सामयिक, कम संसाधन में कीट प्रबंधन तकनीक को अपनाने के बाद भी मौजूदा कीटों की बढ़ती हुई संख्या और कई नए अन्य कीटों की उपस्थिति विभिन्न अजैविक दबावों की भूमिका का संकेत देती है | पीली मकड़ी की बहुभक्षी प्रकृति के साथ बदलते फसल चक्र एवं उससे पहले अनुकूल वैकल्पिक फसल की उपस्थिति आमतौर पर इस कीट के प्रकोप को बढ़ाती है | वैकल्पिक फ़सल की नियमित उपलब्धता जैसे मिर्च, तिल और अनुकूल जलवायु पीली मकड़ी को बढ़ाने में मदद करता है | पीली मकड़ी पटसन का एक महत्वपूर्ण कीट है | इस कीट के हमले के कारण रेशा की उपज और गुणवत्ता दोनों कम हो जाते है | छोटे आकार की मकड़ी का पता लगाना मुश्किल है लेकिन उनकी क्षति अक्सर पौधों एवं पत्तियों के आकार पर प्रतिकूल प्रभाव पैदा करती है | पटसन के किसान जो पीली मकड़ी के प्रकोप से जुड़े पौधों के लक्षणों से परिचित नहीं है वह शुरुआत में पोषक तत्वों या वाइरस विकार या फाइटो टोक्सिसिटी के लक्षणों से भ्रमित हो सकते है |

कृषि में टारसोनिमिड मकड़ी का महत्व

पीली मकड़ी, *पोलीफैगोटार्सोनोमस लैटस* बैंक (टार्सोनेमिड: एकारी) मकड़ी के इस समूह के सबसे महत्वपूर्ण सदस्यों में से एक है | टार्सोनेमिड समूह से संबन्धित मकड़ी का कृषि में बहुत महत्व है | मकड़ी के ये समूह आमतौर पर कृषि एवं बागवानी महत्व के 250 से अधिक पौधों को नुकसान करते है | जरूरत से अधिक रासायनिक का प्रयोग इन मकड़ियों को बढ़ाने में सहायक होता है जिससे इनके प्रबंधन में कठिनाई होती है | मकड़ी की प्रबंधन में अन्य अडचन यह है कि प्रारंभिक प्रकोप का ज़्यादातर समय पता नहीं हो पाता है क्योंकि इसके बहुत छोटे आकार होने के कारण इस पर ध्यान नहीं जाता है | इसके अलावा मकड़ी पत्तियों की निचली सतह पर पौधे से रस चूसती है जिन पर कीटनाशकों का असर कम होता है | मकड़ी का जीवन चक्र बहुत छोटा होता है इसके साथ – साथ उच्च प्रजनन क्षमता और कीटनाशकों के खिलाफ प्रतिरोध विकसित करने की क्षमता भी होती है| इन्हीं कारणो से पीली मकड़ियों में कीटनाशकों के प्रति प्रतिरोधी क्षमता विकसित होती है |

मकड़ी का जीवन चक्र

पीली मकड़ी पटसन के महत्वपूर्ण विनाशकरी कीटों में से एक है | विश्वव्यापी वितरण एवं व्यापक फसलों को नुकसान करने के कारण इसे अक्सर 'ब्रॉड माइट' कहा जाता है | भारत में पटसन उगाने वाले राज्यों में इस मकड़ी का प्रकोप पाया गया है |

पीली मकड़ी

मकड़ी की उम्र बढ़ने के साथ रंग सफ़ेद से ज्यादा गहरा होता जाता है| मादाएँ नर से बड़ी होती है और उनका औसत जीवन काल लगभग एक सप्ताह का होता है | पुरुषों की औसत अवधि 6 दिन है | अंडा से निकलने के बाद नर 2-3 घंटे के लिए बहुत धीरे धीरे चलता है और पत्ती की निचली सतह से रस चूसता है उसके बाद नर कीट मादा कीट की तलाश में पूरे पत्ते की सतह पर घूमता है | एक नर कीट एक समय में एक ही मादा कीट को ले जा सकता है | मेटिंग के बाद मादा कुछ समय तक मुलायम पत्तियों की शिराओं के बीच निचली सतह पर अंडा देती है | लगभग पूरे जीवन काल में एक मादा 23 अंडे देती है | मकड़ी में अंडे की अवस्था 30 घंटे तक रहती है | पीली मकड़ी

का सक्रिय निम्फ सफ़ेद रंग का होता है जिसके तीन जोड़े पैर होते है | वयस्क अवस्था के दौरान पैरों की चौथी जोड़ी विकसित होती है | नर और मादा कीट में औसत निंफल अवधि 24 घंटे है| निष्क्रिय अवस्था में निम्फ नाव के आकार की और रंग में क्रिस्टल सफ़ेद होती है | इस अवस्था को 'प्युपा' भी कहा जाता है | पटसन की एक फसल अवधि में 14 पीढ़ियाँ होती है और कभी कभी एक दूसरे के समानान्तर एवं अधिक पीढ़ियों के चलते मकड़ियों की संख्या में काफी बढ़ोतरी होती है |

क्षति की प्रक्रति

पीली मकड़ी से संक्रमित पौधा

निम्फ और वयस्क मकड़ी पत्तियों की निचली सतह से रस चूसते है जिससे पत्ती मुड़ जाती है | पौधों के ऊपर से 7 वीं पत्ती तक पीली मकड़ी पायी जाती है | पत्तियों का बढ़ना कम हो जाता है, जल्द ही वे तांबा – भूरा रंग की हो जाती है और समय से पहले गिर जाती है | पौधों की लंबाई कम हो जाती है और पटसन की उपज में नुकसान होता है | गंभीर क्षति में पटसन की लंबाई आधे से भी कम हो जाती है | सफ़ेद पटसन की तुलना में पीली मकड़ी का संक्रमण तोषा पटसन में अधिक होता है | पीली मकड़ी के प्रकोप के कारण रेशे की गुणवत्ता में कमी हो जाती है | इस मकड़ी का पौधों पर 20% और 90% संक्रमण से उपज में अनुमानित 10% से 42% हानि होती है | मकड़ी से होने वाली क्षति पौधों को कमजोर कर देती है जिसके प्रभाव से रेशे कमजोर हो जाते है | मकड़ी से प्रभावित पौधों का रेशा 20 – 30% कमजोर हो जाता है |

पीली मकड़ी के लिए उपयुक्त मौसम

अधिकांश शोधकर्ताओ ने बताया है कि पीली मकड़ी की गतिविधि पूरे वर्ष बनी रहती है | पटसन की अगेती फसल में मकड़ी से नुकसान ज्यादा होता है | रेशा के लिए पटसन की फसल में मार्च से मई तक एवं बीज फसल में अक्टूबर से नवंबर तक मकड़ी का नुकसान ज्यादा होता है | जुलाई-अगस्त महीने के दौरान मकड़ी बहुत कम दिखाई देती है। लंबे समय तक अधिकतम तापमान (30-32 डिग्री सेल्सियस) और न्यूनतम तापमान (18 डिग्री सेल्सियस) की व्यापकता, उच्च आर्द्रता (74%) और वर्षा की अनुपस्थिति के कारण मकड़ी की संख्या में वृद्धि होती है।

पीली मकड़ी के लिए अनुकूल घटक

25 वें और 26 वें मौसम संबंधी सप्ताह के दौरान का मौसम पीली मकड़ी के तेज गुणन करने के लिए अधिक अनुकूल बताया गया है। यद्यपि यह मध्य अप्रैल से मध्य जुलाई के दौरान फसल पर हमला करता है लेकिन उच्च आर्द्रता के साथ मेघाच्छादित मौसम और सुबह का तापमान खेत में पीले मकड़ी के गुणन के लिए अनुकूल पाया गया।

पटसन पर पीली मकड़ी का प्रबंधन

फसल प्रबंधन के साथ परजीवी, सूक्ष्मजीवी, वानस्पतिक एवं रासायनिक कीटनाशियों का एकीकृत एवं समुचित उपयोग मकड़ी के नियंत्रण में ज्यादा कारगर और टिकाऊ होता है |

नाशीजीव प्रतिरोधी किस्म

एकीकृत कीट प्रबंधन के संदर्भ में कीट प्रतिरोधी क़िस्मों की भूमिका उपयोगी होगी | प्रतिरोधी किस्म, कीट की संख्या एवं पर्यावरण प्रदूषण को कम करने में सहायक है | ज़्यादातर शोध कार्यों में मकड़ी के इस पहलू पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया है पटसन मकड़ी प्रतिरोधी स्रोतों का पता लगाने के लिए जननद्रव्यों का परीक्षण व्यवस्थित रूप से नहीं हुआ है। अब तक जंगली पटसन प्रजातियों के अभिगम ने भी कोई उत्साहजनक परिणाम नहीं दिया। पिछले अध्ययनों से संकेत मिलता है कि तोषा और सफेद पटसन की किस्में जे.आर.ओ. 7835 और जे.आर.सी. 212 मध्यम प्रतिरोधी हैं। अन्य तोषा पटसन किस्मों में, जे.आर.ओ. 524 और जे.आर.ओ. 204 को नई किस्मों की तुलना में मकड़ी के प्रति अधिक सहिष्णु पाया गया है जो मकड़ी के प्रकोप से रेशा की गुणवत्ता और उत्पादकता में उल्लेखनीय कमी नहीं होने देता है। मकड़ी प्रभावित क्षेत्रों में इसके प्रकोप को कम करने के लिए इन किस्मों को बुवाई के लिए चुना जाना चाहिए।

शस्य क्रियाओं द्वारा नियंत्रण

अन्त:फसल क्रियाओं जैसे कि जल्दी या देरी से बुवाई, फसल चक्र, बुवाई की दूरी, सिंचाई और उर्वरकों का सही प्रयोग पटसन पर मकड़ी की क्षति के प्रभाव या गंभीरता को कम करने के लिए किया जा सकता है। अप्रैल के दूसरे सप्ताह में पटसन की फसल बोने से कुछ हद तक मकड़ी का प्रकोप कम हो सकता है। अगेती पटसन में पीली मकड़ी का प्रकोप अधिक पाया गया है। पटसन में, हालांकि अधिकांश किसान छिड़ककर बुवाई करते हैं, लेकिन कतार में बुवाई करने से मकड़ी का प्रकोप कम पाया गया है क्यों कि इससे मकड़ी कि वृद्धि की लिए समुचित सूक्ष्म वातावरण नहीं मिल पाता है | सूखे कि अवस्था में पटसन की फसल पर नुकसान के लक्षण अधिक गंभीर होते हैं। इसलिए मिट्टी में नमी को बनाए रखना बहुत महत्वपूर्ण है ताकि पौधों में नमी की कमी के कारण मकड़ी के प्रकोप का तनाव न बढ़े। पौधे के पोषण के लिए प्रयोग किए गए उर्वरकों का भी उपयोग मकड़ी की संख्या को प्रभावित करता है | पोटाश जातीय उर्वरकों के प्रयोग से मकड़ी कि आबादी एवं उससे होने वाला नुकसान कम हो जाता है |

जैविक नियंत्रण

कृषि में मकड़ी कीटों की जैविक नियंत्रण की भूमिका अन्य आर्थ्रोपॉड कीटों की तुलना में कम है। पौधों को क्षति पहुंचाने वाले मकड़ी का रासायनिक नियंत्रण लगातार कठिन होता जा रहा है इसलिए प्राकृतिक

जैव नियंत्रण एजेंटों का उपयोग कर इसके जैविक नियंत्रण पर ज्यादा ध्यान देने की आवश्यकता है। इनमें से बहुत कम फाइटोसीड परभक्षी मकड़ियों टार्सोनिमिड मकड़ियों के खिलाफ प्रभावी पायी गयी | अभी तक परभक्षी मकड़ियों का जैविक नियंत्रण में प्रयोग करने के लिए, क्षेत्र सफल प्रयोग नहीं हो पा रहा है। इसका कारण मकड़ियों के बड़े पैमाने पर उत्पादन, तनाव सहिष्णुता और बहुमुखी वितरण प्रणाली की कमियाँ हैं। मकड़ियों के जैविक नियंत्रण में फाइटोसिड मकड़ी परभक्षीयों का संरक्षण पर आधारित है। इसलिए चयनात्मक कीटनाशकों का उपयोग करना बहुत महत्वपूर्ण है जो इन परभक्षी मकड़ियों के लिए सुरक्षित हैं।

वानस्पतिक और जैव कीटनाशक

आज कई वानस्पतिक और जैव कीटनाशक व्यावसायिक रूप से उपलब्ध हैं। ये कीटनाशक आमतौर पर मानव, लाभकारी जीवों और पर्यावरण के लिए सुरक्षित होते हैं। मकड़ी के खिलाफ इस वानस्पतिक कीटनाशक के साथ खनिज तेल @3 मिली प्रति लीटर + नीम तेल @3 मिली प्रति लीटर का मिश्रण को मिलाकर प्रयोग करने से ये ज्यादा असरदार हो जाता है। माइक्रोबियल कंट्रोल एजेंट, विशेष रूप से एंटोमोपैथोजेनिक कवक पीली मकड़ी के नियंत्रण में प्रभावी रहा है। संक्रामकता के आधार पर ($6X10^8$ सीएफयू सांद्रता) *इसारिया फ्यूमोसोरोसिया* (पेइकोलॉमी फ्यूमोसोरोसस) और *ब्यूवेरिया बैसियाना* पीली मकड़ी पर प्रभावी पाया गया है।

रासायनिक नियंत्रण

अधिकांश फसलों में कीटों के प्रबंधन के लिए रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग अभी भी सबसे अधिक प्रचलित है। अब तक कई मकड़ी नाशकों एवं कीटनाशकों या उनके संयोजन का पीली मकड़ी पर प्रबंधन प्रभावी पाया गया। हाल के निष्कर्षों के आधार पर स्पाइरोमीसेफेन 240 एससी (120 ग्राम एआई) या फेनजाक्विन 10 ईसी (100 ग्राम एआई / हे) या फेनोप्रोक्सिमेट 5 ईसी (50 ग्राम एआई / हे) और प्रोपरगाइट 57 ईसी (700 ग्राम एआई / हे) मकड़ी के रासायनिक नियंत्रण में प्रभावी पाया गया| बारिश होने के बाद मकड़ी की संख्याओं के आधार पर ही मकड़ीनाशी का प्रयोग करना चाहिए |

एकीकृत प्रबंधन

पीली मकड़ी का रासायनिक नियंत्रण लगातार कम असरदार साबित हो रहा है इसलिए, यह जरूरी है कि हम एकीकृत नियंत्रण को प्राथमिकता दें। इसमें शस्य क्रिया एवं फसल प्रबंधन, प्रतिरोधी किस्म, जैविक नियंत्रण, प्राकृतिक कीटनाशकों और रासायनिक कीटनाशकों का चयनात्मक और विवेकपूर्ण उपयोग करें। साथ ही हमें कीटनाशकों के उपयोग को कम करते हुए प्राकृतिक शत्रुओं को प्रभावी रूप से बढ़ाने की संभावनाओं का पता लगाना चाहिए। हम पहले से ही, फसल में कीटों की संख्या में वृद्धि का अनुमान, हम पिछले कई वर्षों के उनके जलवायु के हिसाब से परिवर्तनशील संख्या के आंकड़ों के अध्ययन से पता लगा सकते है।

JRF 2

JRF 2
(Tiara)

JRO 204
(Suren)

JRO 204

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

केपसरेअसं
CRIJAF

भाकृअनुप - केन्द्रीय पटसन एवं समवर्गीय रेशा अनुसंधान संस्थान

(आईएसओ ९००१:२०१५ प्रमाणित संस्थान)

बैरकपुर , कोलकाता - 700121, पश्चिम बंगाल

फ़ोन: 033-2535-6121/6122 फैक्स: 033-25350415

मेल: crijaf-wb@nic.in, director.crijaf@icar.gov.in

www.crijaf.org.in